निवेदन।

आज मैं पहिले पहल एक नवीन उपहार लेकर आप लोगों की सेवा में उपस्थित होता हूं। आशा है कि आप इसे अङ्गीकार कर मेरे उत्साह को बढ़ावेंगे। यद्यपि मेरी इच्छा थी कि मैं इस उपहार को ले आप लोगों की सेवा में बहुत पहिले उपस्थित होता, पर कुटिल काल को यह स्वीकार न था, अनेक विघ्न आ उपस्थित हुए और अपने मनोरथ को मैं बहुत काल लों पूरा न कर सका। अस्तु सर्वशक्तिमान जगदीश्वर की कृपा से आज मेरा मनोरथ पूरा हुआ है। यदि आप लोगों ने इसका कुछ भी आदर किया तो शीघ्र ही मैं दूसरा उपहार ले आप की सेवा में उपस्थित होऊँगा।

इस स्थान पर मैं अपने परम पूज्य मित्र श्रेष्ट काशी नागरी प्रचारिणी सभा के एक मात्र प्राण बाबू श्यामसुन्दर दासजी बी० ए० को अनेक हार्दिक धन्यवाद देता हूं कि जिन्हों ने अत्यन्त कष्ट उठाकर और अपने अमूल्य और दुष्प्राप्य समय को नष्ट कर इस पुस्तक के सुधारने और छपवाने मे अपना उत्साह दिखा मेरे उत्साह को इतना बढ़ा दिया है कि मैं उसका पूर्णतया वर्णन नहीं कर सकता। वास्तव में यदि इनकी इतनी कृपा न होती तो कदाचित इस ग्रन्थ का प्रकाशित होना ही दुसाध्य हो गया होता।

प्रतापटांड़
(मुजफ्फरपूर)
१५-७—१९००

निवेदक।
केशव प्रसाद सिंह।

भूमिका ।

प्रिय पाठकगण ! हम आज आपको योरप देश के एक प्रसिद्ध पुरुष का वृत्तान्त सुनाते हैं, क्योंकि मिथ्या किस्सों और कहानियों से वास्तविक और सच्ची कहानियां अधिक उपकारक और लाभदायक होती हैं। देखने में आता है कि इस परमात्मा की सृष्टि में नाना प्रकार और भिन्न भिन्न भांति के पुरुष होते हैं कोई धनी है कोई निर्धन, कोई बुद्धिमान है कोई निर्बोध, कोई रोगी है कोई आरोग्य, कोई प्रथम श्रेणी का उपासक और सयमी है, कोई धूर्त और दुराचारी, परन्तु इन सब भांति के पुरुषों में शिरोमणि वे परमेश्वर के प्यारे पुरुष हैं जो औरों के सुख में अपना सुख तथा औरों के दुःख में अपना दुःख जान कर अपने जीवन को परमात्मा की सृष्टि की सेवा में अर्पण कर देते हैं और चित्त को दृढ़ता तथा पुरुषार्थ से अपने धार्मिक उद्देश्य पर स्थिर रहते हैं।

ऐसे महापुरुषों का होना किसी भूमि-विशेष पर अथवा जातिविशेष में नियत नहीं है, किन्तु हर एक देश में तथा हर एक जाति में समय समय पर वे उत्पन्न होते रहते हैं। ऐसे महापुरुष की असाधारण शिक्षा, असाधारण शक्ति, असाधारण साहस, असाधारण ज्ञान, असाधारण परोपकार, और अकारणिक प्रेम को देखकर लोग उन्हें रसूल, पैग़म्बर, वलीअल्लाह, अवतार देवता आदि भिन्न भिन्न नामों से प्रेमपूर्वक स्मरण रखते हैं और उनकी शिक्षा का अनुगामी होना अपना मुख्य कर्तव्य समझते हैं, और उनके नाम से स्मारक चिन्ह स्थापित करते हैं, उनके उपदेशों को प्रमाण मान उनका पालन करना अपना

परम कर्तव्य जानते है। धार्मिक संसार ऐसे महा पुरुषों को देवता, अवतार, महात्मा करके मानता है। ऐसे ही लोगों के नाम से संसार में भिन्न भिन्न मत प्रचलित हैं। उनकी शिक्षा का अंकुर लोगों के चित्त पर बहुत दृढ़ हो जाता है। संसार में अनेक राजे महाराजे तथा राजधानियों का नाश हो गया। कालचक्र के प्रभाव से सहस्रों उन्नत हुए, तथा सहस्रों का उस उन्नत अवस्था से अधपात हुआ। परन्तु उन महापुरुषों का सिक्का उसी भांति जैसे का तैसा प्रतिदिन अधिक दृढ़ भाव से चला जाता है और चला जायगा। परम्परा से मनुष्य जातियां ऐसे महापुरुषों के नाम पर जीवन देने को उपस्थित रहती आई हैं और बहुत से लड़ाई झगड़े भी इन्हीं मतों के कारण हुआ करते हैं। ऐसे महापुरुष केवल धार्मिक संसार ही में उत्पन्न नहीं होते किंतु राज्यनैतिक तथा व्यवहारिक संसार में भी समय समय पर प्रगट हुआ करते हैं, जो अपने ज्ञान के प्रकाश तथा अपने शुद्धाचरण के उदाहरण से उस जाति के जमे हुए अंधकार को दूर कर देते हैं, सहस्रों वर्षों के जमे हुए भिन्न भिन्न भाव, अनेक विश्वास उनके ज्ञान प्रकाश से मिथ्या सिद्ध होने लगते हैं, उनकी तीव्र बुद्धि से उन्नति की लहरें चारों ओर फैल कर अपना अधिकार जमा लेती हैं। आपने पढ़ा होगा कि भेड़ चराते चराते न्यूटन ने आकर्षण शक्ति के नियम का आविष्कार किया था और उसके इस नवीन आविष्कार ने किस भांति संसार में अपना प्रभाव उत्पन्न कर दिया था। ऐसे ही आपने यह भी पढ़ा होगा कि कितने समय तक सारे योरप तथा एशिया के कई प्रान्तों के लोग पृथ्वी को स्थिर मानते थे (यद्यपि भारतवर्ष में बहुत ही प्राचीन काल से पृथ्वी को चल मानते थे जैसा कि बहुत से प्राचीन पुस्तकों से प्रगट होता है), यहां तक कि एक इटालियन महापुरुष ने पृथ्वी को

सूर्य के चारों ओर घूमते हुए सिद्ध किया। रेल, तार, तथा छापे के यंत्र के प्रचलित करने वालों ने एक प्रकार से संसार की काया ही पलट दी है और केवल थोड़ी ही शताब्दी के पीछे हमको भूगोल चित्र में कैसा अद्भुत परिवर्तन दीख पड़ता है कि कभी कभी उस समय का ध्यान करना भी हमारे लिये कठिन दीखता है जो रेल तार आदि के पूर्व था और यह विचारने लगते हैं कि वे लोग विना रेल के कैसे यात्रा करते होंगे, तथा विना तार छापे के उनका काम कैसे पूरा होता होगा। धार्मिक संसार में जैसे असाधारण पुरुष उत्पन्न होकर ऐसे ऐसे विपरीत भाव उत्पन्न कर देते है वैसे ही राजनैतिक संसार भी ऐसे महापुरुषों से शून्य नहीं है। आप जानते हैं कि संसार सदा एक भाव पर नहीं रहता, यदि आज कोई जाति स्वतंत्र है तो अवश्य ही कल परतंत्र होगी, एवं यदि कल कोई जाति परतंत्र थी तो आज स्वतंत्र है। यही रूप सदा से होता चला आया है और होता चला जायगा इन्हीं कारणों से अथवा कई और कारणों से महापुरुष पृथ्वी पर प्रगट होते हैं जो अपनी पतित और पददलित जाति को पुन उन्नति के मार्ग पर लगा देते हैं। आप एक ऐसे देश की कल्पना करें जो कि सहस्रों वर्षों से दासत्व में चला आता हो, जिस देश के वासियों को एक अन्य जाति अपनी सम्पत्ति समझ उन पर यथारुचि शासन करना अपना अधिकार समझती हो, उनकी सम्पदा, उनका वल, उनका वोध, जो कुछ है सभी उन शासन-कर्ताओं के लिये हो यहां तक कि स्वतंत्रता का ध्यान भी जाति भर के हृदय से दूर होचुका हो, कभी किसी पुरुष के ध्यान में भी न आता हो कि यह जाति कभी स्वतंत्र होगी, अथवा अपने देश पर आप कभी अधिकार रक्खेगी और अपने परिश्रम और योग्यता से स्वयं लाभ उठावेगी, अपने सम्पादन किए

गन सम्पदा का अधिकार आप रक्खेंगी, यदि कुछ आशा होती
भी है तो इस भांति से कि कदाचित् इस शासनकारी जाति से
भी कोई सबल जाति किसी समय अपनी सबलता के अभिमान
से विजय करती करती उस शासनकारी जाति को भी विजय
करले और उसके स्थान पर अपना शासन स्थापित करे। इस
पददलित जाति में पुनः दैवात् एक ऐसा महापुरुष प्रगट होता
है जो परमेश्वर की ओर से स्वजातीय प्रेम तथा स्वतंत्रता की
उत्कट इच्छा अधिकतर पाता है वह महापुरुष अपना जीवन
केवल जाति की सेवा तथा स्वतन्त्रता प्राप्त करने के हेतु समझता
है। वह अपने मिशन के अभिप्राय को उच्चस्वर से अपनी जाति
के सन्मुख उपस्थित करता है और आप स्वयं अपनी जाति के
हाथों दुःख सहन करता हुआ अनेक प्रकार के तिरस्कारों को
उठाता हुआ, अपने साहस और पुरुषार्थ के आगे प्रत्येक वस्तु
को तुच्छ समझता है, यहां तक कि वह जाति अपनी अज्ञान रूपी
निद्रा से जाग्रत तथा चैतन्य हो उसका साथ देती है और
समयानुरोध से स्वतंत्रता को भी प्राप्त करती है। आज हम
आपको एक ऐसे ही महापुरुष का जीवन वृत्तान्त सुनाते हैं।
परन्तु स्मरण रखिएगा कि जिसका जीवनचरित्र हम सुनाया
चाहते हैं वह केवल राजनैतिक पुरुष ही न था, किन्तु उत्तम
श्रेणी का एक व्यवहार-कुशल तथा धर्म्म-उपदेशक भी था।
उसके बचन और लेख एक अद्भुत धर्म्म-विश्वास के साधक
प्रतीत होते हैं। यद्यपि उसके जीवनकाल में योरप ने उसका
यथोचित सम्मान न किया, तथापि आज सारा योरप एक
स्वर से मेज़िनी को १९ वीं शताब्दी के महपुरुषों का शिरो-
मणि बतलाता है। हर तरह के लोग उसकी प्रशंसा में उत्सा-
हित हो रहे हैं और अपने देश में तो महात्मा मेज़िनी पूजनीय
जाते हैं। इटली देशवासी जबलों पृथ्वी तल पर हैं, तबलों

मेज़िनी का नाम और काम स्मरणीय बना रहेगा। वह इटली जो कि गत शताब्दी में महा घोर अन्याय का घर हो रही थी, जहां पर परस्पर विरोध अपना राज्य जमाए था, जहां के लोग चिरकाल से " स्वतंत्रता " के शब्द को भी अपने कोष से निकाल चुके थे, जहां भिन्न भिन्न प्रान्तों के लोगों में परस्पर प्रेम होने की अपेक्षा परस्पर द्वेष फैल रहा था, जहां कि भिन्न २ प्रान्तों के लोग भिन्न २ जातियों के दास बन रहे थे, जहां धर्म्म की ओट में नाना प्रकार के पाप होते थे और जहां कि न्याय-प्रणाली प्रति दिवस बिगड़ती जाती थी, जहां दासत्व तथा कायरता ने अपना घर बना लिया था, वह देश जो कि विदेशियों की भोग्य भूमि हो रहा था, जहां अन्य देश के शूर वीर सिपाही युद्ध के लिये उपस्थित रहते थे, वही देश आज एक विद्वान वीर महापुरुष के पुरुषार्थ से स्वतंत्र तथा सब बातों में सहमत हो रहा है, तथा सारे देशवासी अपनी स्वाधीनतामें मग्न हो रहे हैं। उस देश की सम्पूर्ण बुराईयां दासत्व के साथ ही लुप्त हो गईं और आज वही इटली देश अपनी उन्नति में तत्पर तथा योरप देशकी सुप्रसिद्ध जातियों में मुख्य गिनाजाता है। गत पचास वर्ष पूर्व इटली देश आस्ट्रिया, फ्रांस, तथा पोप के शिकंजे में अपनी जान से दुखित रहता था, आज वही इटली इन तीनों से निश्चिन्त योरप देश की राजनैतिक शतरंज में न केवल अपनी स्वजातीय भलाई बुराई की रक्षा करती है, परन्तु और जातियों के भाग्यों का निपटेरा करने में सम भाग लेती है। इटली को यह मर्यादा अपने उन सहस्रों सज्जनों के निज प्राणों के बलिदान करदेने से मिली है जिन्होंने इटली को स्वतंत्र करने केहेतु अपना जीवन प्रसन्नता पूर्वक अर्पण कर दिया परन्तुयह हज़ारों नहीं किन्तु लाखों जीवन अधिक नष्ट होते तौ भी कोई प्रत्यक्ष फल न होता, यदि परमात्मा की ओर से

एक विद्वान बुद्धिमान और दूसरा वीर बलवान पुरुष अपनी मातृभूमि के उद्धार के हेतु एक विशेष मनुष्य-रूप धारण न करते। हम इन दोनों वीर महापुरुषों का जीवनचरित सुनाते हैं। क्योंकि इनका जीवन ऐसे वृत्तान्तों से परिपूर्ण है जो कि आपको विशेषतः चित्ताकर्षक और रुचिकर होगा, तथा आपके लिये उपदेश रहित भी न होगा। महात्मा मेज़िनी और जेरिवाल्डी के जीवन-वृत्तान्त केवल इसी कारण से पढ़ने योग्य नहीं हैं कि उन दोनों ने साहस पूर्वक प्रत्येक दुःख विपत्तियों को सह कर अपने जीवन को अपनी मातृभूमि के सेवा में बिता दिया और इस भांति से स्वदेश तथा स्वजाति को अनेक दुःखों से छुटकारा दिलाया। किन्तु इन दोनों पुरुषों के जीवनवृत्तान्त इस कारण भी पढ़ने योग्य हैं कि उन दोनों ने जहां कहीं हो सका स्वतंत्रता के नियमों का प्रचार किया है और सदा अत्याचार से पीड़ित पुरुषों के साथी और सहायक बने रहे तथा दृढ़-प्रतिज्ञा, शुद्धाचरण, उत्कृष्टता, शुद्ध मनोविचार तथा साहस के स्वयं प्रतिनिधि बन कर औरों के लिये जिन्होंने एक आदर्श खड़ा कर दिया है। फिर जो शिक्षा उदाहरण द्वारा दी जाती है वह अत्यंत सुगमता से हृदय पर खचितहो जाती है। इन दोनों महात्माओं की जीवनी सिद्ध करती है कि जो पुरुष शुद्ध चित्त से स्वजातीय संशोधन में तत्पर रहते हैं वे अन्त में सब दुःख कठिनाइयों को सहकर अवश्य कृतकार्य्य होते हैं। जो लोग स्वजातीय सेवा का उच्चतम उदाहरण देखा चाहें, उनको इन दोनों महात्माओं के चरित्र के सदृश दूसरा इतिहास नहीं मिलेगा। स्वदेश तथा स्वजातीय सेवा के कारण जो जो दुःख उन सज्जनों को उठाने पड़े, जिन विपत्तियों को उन्हें सहन करना पड़ा और जिस प्रसन्नता तथा दृढ़ता से उन दोनों ने उनको सहन किया और जिस अकारणिक प्रेम से वे अपने मरण पर्यन्त अपने धर्म्म पर

स्थिर रहे, ये सब वृत्तान्त ऐसे हैं कि जिनके पढ़ने से मनुष्य की आत्मा अपने आपको पवित्रता के वायुमण्डल से परिवेष्टित पाती है और उस पवित्रता को सम्पादन करने की इच्छा तथा चेष्टा करने लग जाती है। हम सब से प्रथम महात्मा मेज़िनी का वृत्तान्त सुनाते हैं। क्योंकि हमारी सम्मति में महात्मा मेज़िनी गुरू और जेरिवाल्डी शिष्य प्रतीत होते हैं। यद्यपि कार्य्य को समाप्ति पर पहुंचाने वाला और अनुपम वीरता से अन्त में देशोद्धार करनेवाला जेरिवाल्डी ही हुआ है, तथापि यह बात भी किसी को अस्वीकृत न होगी कि यदी महात्मा मेज़िनी की राजनैतिक शिक्षा का प्रचार इटली में पूर्णतया न होता तो जेरिवाल्डी को अपने मिशन का पूरा करना, तथा अपने जीवन-उद्देश्य में कृतकार्य्य होना कुछ कठिन क्या सर्वथा असम्भव था। मेज़िनी की मृत्यु को अभी पंचीस वर्ष भी व्यतीत न हुए होंगे और अंगरेजी साहित्य तथा समाचार पत्रों के पढ़नेवाले अवश्य ही जानते होंगे कि योरोपियन जाति किस प्रतिष्ठा तथा सम्मान से इस महात्मा का स्मरण करती है, और किस प्रेम से उसके नाम को जपती है। एक अंगरेजी समाचार पत्र "रिव्यू आफ़ दी रिव्यूज़" उसके विषय में यों लिखता है —

"जो शताब्दी अब बीत रही है उसका इतिहास पढ़ने से बहुत कम ऐसे योरप में मिलते हैं जिनका नाम मेज़िनी के सदृश प्रतिष्ठित अथवा प्रशंसनीय हुआ हो। योरप के राजनैतिक दल में कदाचित कोई ऐसा दूसरा पुरुष न होगा जिसके जीवन रूपी उदाहरण ने सारे देश में इस प्रकार अपना प्रभाव उत्पन्न किया हो। निस्सन्देह बहुतेरे ऐसे पुरुष मिलेंगे जो अपने देश में उच्चतम श्रेणी के हुए हैं, बहुतेरे ऐसे राजे महाराजे मिलेंगे जिन्हों ने कितनेही युद्ध किए हैं, राजवंश परम्परा का विनाश कर दिया है, राजधानियों को बना बिगाड़ डाला है,

परन्तु जिस समय इन सब के नाम विस्मरण हो जायंगे उस समय भी महात्मा मेज़िनी का नाम लाखों की जिह्वा पर उपस्थित रहेगा। मेजिनी एक बड़े सिद्धान्त का पालन करने वाला वकील था जिसकी शिक्षा और जिसका प्रचार वह ऐसा दत्तचित्त होकर करता था कि उसका नमूना वर्तमान समय में मिलना असम्भव है। उसकी सारी उत्कृष्टता का मूल यही था, पर तौ भी उसका तेज उसका आचार व्यवहार इस प्रकार उच्चतम श्रेणी को प्राप्त थे कि हमारे लिये यही निर्णय करना कठिन है कि मेजिनी की उत्कृष्टता निज सिद्धान्त-पालन के कारण थी अथवा उस सिद्धान्त की उत्कृष्टता उसके पालन करने के कारण हुई। अपने मानसिक उच्च-भावों के अतिरिक्त उसके पास और कुछ नहीं था। उसके सदृश लाखों मनुष्य इटली देश में रहते थे जोकि उस समय अपनी इच्छाओं के प्रतिकूल भिन्न २ सूबों तथा भिन्न २ राज्यों में विभाजित हो रहे थे। मेज़िनी न तो धनाढ्य था और न किसी प्रतिष्ठित वंश का था। मेजिनी का सहायक न तो कोई प्रसिद्ध पुरुष था और न कोई राजा महाराजा ही उसका अभिभावक था। सारांश यह कि वह एक ऐसा साधारण सामान्य पुरुष था जैसे कि महा मरुभूमि में रेत का एक कण होता है। परन्तु जिस समय इस साधारण पुरुष ने अपनी शिक्षा तथा अपने उपदेश का प्रचार करना प्रारम्भ किया, जिस समय उसने अपना प्रोग्राम पबलिक के सन्मुख उपस्थित किया, उस समय निकटस्थ राजधानियां ऐसी भय-भीत हुईं कि उसको देश से निकाल देना ही उन्हों ने यथोचित समझा। केवल देश से निकालने पर ही वे सन्तुष्ट नहीं हुईं, किन्तु सारे योरप में इसका इस तरह पीछा किया गया जैसे एक बड़े जङ्गल में किसी शिकारी या एक भयंकर पशु का पीछा किया जाता है। उस असहाय दीन हीन

पुरुष को अपनी जन्मभूमि छोड़नी पड़ी, और अन्त में लण्डन में उसने आश्रय लिया, और इन सब दुःख क्लेशों को सहकर भी उसने अपने मन्तव्य को न छोड़ा और अन्त में वह अपने उच्च उद्देश्य में कृतकार्य्य हुआ। उसने इटली को जागृत तथा चैतन्य कर दिया। विसमार्क ने जर्मनी के यावत् सूबों को एक करके एक भारी राज्य स्थापित किया, परन्तु स्मरण रहे कि विसमार्क के हाथ कुल बादशाही अधिकार तथा प्रभुत्व विद्यमान था, सारी बादशाही सेनादल उसके हस्तगत थी और जर्मनी जैसे देश की जो कुछ आय थी वह सभी उसके हाथ में आती थी। उसको सामग्री की अथवा धन की कुछ त्रुटी न थी। परन्तु मेज़िनी के पास इनमें से एक भी न था। हां उसके पास वाणी-चातुर्य्य तथा एक ऐसी लेखनी तो अवश्य थी, जिसमें विद्युत की शक्ति कूट कूट के भरी थी, अथवा उसके पास वह दृढ़ विश्वास था कि जिसके द्वारा मनुष्य पर्वत को भी कम्पायमान करदेते हैं। अब यद्यपि उसको मरे पच्चीस वर्ष बीत चुके हैं, तथापि वह अपने समाज और मित्र बन्धुओं में तारे के समान चमक रहा है।"

आगे वही अंगरेज महाशय यों लिखते हैं कि "सन् १८४८ के राज विद्रोह में यदि किसी को अपने जीवन का भय न था तो वह एक मेज़िनी ही था। ऐसा प्रतीत होता था मानो वह अपने मनोविचार का शिकार बनेगा। प्रतिदिन मेज़िनी की मृत्यु का सम्वाद सुनने के लिये लोग कान लगाए रहते थे। मेज़िनी एक सच्चा धार्मिक पुरुष था। वह साधारण सृष्टि से बिलक्षण था। उसने कभी उन छोटी बातों से धोखा नहीं खाया जो सामान्यतः सांसारिक मनुष्य को घेरे रहती हैं। उसके समीप जातित्व का प्रश्न एक धर्मसम्बन्धी सिद्धान्त था जिसमें उसे पूर्णतया निश्चय था जिसको उसने भली भांति बुद्धि की

कसोटी पर कस लिया था और जिसको वह परम कर्तव्य मानता था। उसके लेखों से उस प्रेमपूरित विश्वास की अंग-पुष्टि होती है जो उसको अपने सृष्टिकर्ता परमेश्वर तथा उसकी सृष्टि पर था। वह परमेश्वर तथा उसके बन्दों के बीच किसी मध्यस्थ की आवश्यकता को माननेवाला न था, चाहे वह मध्यस्थ धर्मसम्बन्धी विषयों की सहायता करनेवाला हो चाहे राजनैतिक विषयों की। पर उसका यह विश्वास था कि जो जाति अपने परमात्मा तथा अपने मेम्बरों की पवित्रता तथा शुद्धता पर विश्वास रखती है, वह निस्सन्देह स्वतंत्रता तथा पूर्णता उन्नति को प्राप्त होने के योग्य है। सांसारिक छोटे छोटे काम यद्यपि उसकी उन्नति के मार्ग में प्रतिबन्धक हों, पर वास्तव में उसकी स्वतंत्रता वा उन्नति को कदापि नहीं रोक सकते"।

एक दूसरे पत्र में उसकी कई एक चिट्ठियां प्रकाशित हुई हैं, जिनसे विदित होता है कि वह विश्वास का कैसा पक्का था। उसका स्वजातीय प्रेम अत्यन्त दृढ़ और पवित्र था। प्रथमावस्था में ही उसने ठान लिया था कि मैं अपना जीवन स्वजातीय सेवा में व्यतीत करूंगा। बस, फिर क्या था, यावज्जीवन वह अपने निश्चित मार्ग पर स्थिर रहा। सांसारिक कोई कामना या मोह इत्यादि उसको अपने स्थान से चलायमान न कर सका। एक दृढ़ चट्टान के समान वह निज पवित्र कर्म्म में लगा रहा। माता का प्रेम, पिता का डर, विवाह का विचार, रोटी कपड़े की कमी, मित्रों का विपरीत भाव, अपने सहकारियों का नैराश्य भिन्न भिन्न रूप से उसके निकट आए। अपने कार्य्य में भी उसको जहां तहां हानि पर हानि हुई, परन्तु उसने एक का भी ध्यान न किया और उस योगी जन की भांति, जो परमात्मा के ध्यान में मग्न हो सारे संसार को बिसार देता है और अपनी आत्मा को

परमात्मा में विलीन कर देता है, मेजिनी ने भी अपनी आत्मा को अपनी देशभक्ति तथा जातीय प्रेम के साथ ऐसा अभेद कर दिया कि संसार में इन दो सेवाओं के अतिरिक्त और कोई वस्तु उसको भली नहीं लगती थी। कविओं ने प्रेम की प्रशंसा में अनेक पुस्तकें रचडाली हैं और ईश्वरीय प्रेम उसको कहा है जो ज्ञानी योगी को परमेश्वर के साथ होता है परन्तु मेजिनी का प्रेम भी इस ईश्वरीय प्रेम के यदि समान नहीं था, तो उसको प्रथम सोपान कहना किसी प्रकार मिथ्या नहीं। अनेक बेर कई स्त्रियां उससे मिलीं जिन्होंने उससे विवाह करना चाहा और जो हर तरह उसके योग्य थीं जिन्होंने समय समय पर अपने प्रेम का प्रादुर्भाव भी दिखाया, जिन्होंने उसके प्रेम से विरक्त हो किसी दूसरे से विवाह तक नही किया; जिन्होंने उसके संग बहुत से उपकार किए, तथा उसको उसके कार्य्य में सहायता दी। प्रायः उसके चित्त में ऐसा संकल्प उठता कि वह अपने दुःखमय जीवन को विवाहित करके एक दुःखसंघातिन बीबी की प्रेम भरी दृष्टि से कुछ सुखी कर ले। परन्तु वह नित्य यही विचारता था कि जिसके देश की यह बुरी अवस्था हो जैसी की इटली की है, उसको विवाह जैसे आनन्ददायक पदार्थ से क्या सम्बन्ध ? वह सदा उन लेडियों को जो उसके साथ विवाह की इच्छा प्रगट करती थीं, यही उत्तर देता कि मैं अपने देश की भक्तिके साथ विवाह कर चुका हूं, अब पुनः विवाह करना उचित नहीं। अपनी जाति से जो प्रण किया है वह आज्ञा नहीं देती कि किसी स्त्री के साथ अपना सम्बन्ध करूं। मैं अपने प्रेम के भाग नही कर सकता। जितना प्रेम और सेवा मेरे पास है वह सब जन्मभूमि के समर्पण है। यह कदापि नही हो सकता कि उसको विभाजित करके कुछ प्रेम एक स्त्री को देदूं। ऐसा करने से मैं कलंकित ठहराया जा सकता हूं जिसके लिये मैं अभी प्रस्तुत

नहीं। एक युवा स्त्री उसके प्रेम में मर गई, पर मेज़िनी का चित्त कदापि स्त्री प्रेम में आसक्त न हुआ। क्यों न वह भूमि भाग्यवती हो जिसने ऐसे पुत्र उत्पन्न किए हैं? क्यों न वह मनुष्य-समाज स्वतंत्रता के उपयोगी हो जिसने ऐसे पुत्र जने हैं? आज योरप तथा युरोपियन जाति दूसरे देश तथा मनुष्यों में श्रेष्ठ हैं। दूसरे देश तो मानो इनकी भोग्यभूमि हो रहे हैं, जिनपर अपनी इच्छानुसार ये लोग शासन प्रबन्ध करते हैं। भूमण्डल की सब विद्या इनके निकट मानो हाथ जोडे खड़ी हैं, चाहे उससे जो कार्य्य लें-युद्ध का कार्य्य लें वा सन्धि का, उन्नति का काम लें अथवा अवनति का। सायंस तो मानो उनका दास बन रहा है, चाहे जिस तरह से उससे काम लें। शेष भूमण्डल के लोग इनके मुख की ओर एक टक देख रहे हैं और प्रत्येक चलन व्यवहार में इन्हींके अनुगामी बन रहे हैं। हम भी एक युरोपियन जाति की प्रजा हैं उन्हें अधिकार है चाहे जिस भांति शासन प्रबन्ध करें, अपनी इच्छानुसार-चाहे जिस भांति हमसे बर्ताव करें। हमारा तन मन धन सभी उनके अधिकार में है। हमारे राजे, बाबू, महाराजे सभी उनके आधीन हैं। किसी का साहस नहीं कि उनकी इच्छा विरुद्ध सांस भी लेसकें। इनका देश हमारे देश से हजारों कोस की दूरी पर है। मार्ग में बहुधा पहाड़ समुद्र मिलते हैं। उनकी संख्या हमसे बहुत कम है। परन्तु फिर भी वह सबल तथा हमारी जाति निर्बल है और ऐसी थोड़ी संख्या से ऐसे बड़े देश और ऐसी बड़ी जाति पर वे राज्यशासन कर रहे हैं। उनकी बुद्धि और चतुरता के निकट समुद्र पहाड़ सब तुच्छ हैं, सबको काटते चीरते तै करते चले आते हैं। वे प्रति दिन आगे ही बढ़ते चले जाते हैं। जो जो कुमार्ग तथा दुर्गम स्थान आर्य्यों को नही ज्ञात थे, इन्हों ने उन्हें खोज निकाला। धूंए, आग और बिजली को अपने वश

कर ऐसा जाल सारी पृथ्वी पर फैलाया है कि क्षण क्षण पल पल का समाचार इन्हें मिलता रहता है। हिमालय की हिमाच्छादित चोटियां, मरुभूमि और जङ्गल के भयंकर पशु, सिन्धु, गंगा और ब्रह्मपुत्र के अथाह जल सभी इनके निकट तुच्छ हैं—तुच्छ ही नहीं वरन् इनकी आज्ञा के आधीन हैं। अपनी बुद्धिमत्ता तथा धूर्तता से ऐसा सुप्रबन्ध करते हैं कि मनुष्य की इतनी बड़ी संख्या इनकी दास हो रही है। भूमण्डल का ६ वां भाग इनके आधीन हो रहा है। यदि यह सब कुछ उन्हें प्राप्त है और हमको नहीं, तो जो प्रश्न स्वतः हृदय में उठता है वह यह है कि वे कौन से ऐसे गुण हैं जो उनमें पाए जाते हैं और हम सब में नहीं है। हमारा उत्तर केवल यही है कि वे उन मनुष्य-जातियों में से हैं जो मेज़िनी जैसे पुत्र उत्पन्न करती हैं। अंगरेज़ी जाति के एक एक बालक की रग में देश-हितैषिता तथा स्वजातीयता के अनुराग का रक्त धधक रहा है। हर एक मनुष्य चाहे वृद्ध हो या युवा नित्य यही विचारता है कि स्वजातीय उत्कृष्टता, स्वजातीय मान, स्वजातीय उन्नति, तथा स्वजातीय रक्षा के पालन का भार उसके माथे है। यदि जाति की अवनति अथवा निन्दा होगी अपमान होगा, अथवा अन्य जाति से पराजित होगी, जो कुछ अवनति जाति में होगी वह स्वयं उस का कारण समझा जायगा, अतएव उनको उचित है कि वह सम्पूर्ण संकल्पों में श्रेष्ठ अपनी जातीय उन्नति के संकल्प को समझे। परमेश्वर ने ऐसी जाति से हमारा सम्बंध कर दिया है जिसका प्रत्येक बालक शूर वीर, उदार चतुर, देशहितैषी, तथा स्वजातीय प्रतिपालक है। इससे आप यह तात्पर्य्य न निकालें कि उनमें कोई अवगुण वा दोष नहीं, दोषों से रहित वो केवल एक परमेश्वर है। मेरा तात्पर्य केवल उनके सद्गुणों से है, और इसमें कुछ संदेह नहीं कि वे लोग स्वजातीय गुणों

में हमलोगों से कहीं श्रेष्ठ हैं। इन लोगों से हमलोगों का सादृश्य तो कदापि नहीं हो सकता, किन्तु क्या इनका शासन हमारे लिये लाभदायक नहीं है? इसका उत्तर ज़रा कठिन है, क्योंकि इसके उत्तर में नहीं भी तथा हां भी कह सकते हैं। आप पूछेंगे यह कैसा उत्तर, नहीं भी तथा हां भी। परन्तु मैं यही कहता हूं कि नहीं प्रथम तथा हां पश्चात्। प्रथम नहीं इस कारण से कि इस सृष्टि में किसी जाति का किसी अन्य जाति के आधीन होना सृष्टि नियम के विरुद्ध है। गवर्न्मैंट एक सोशल इन्सटिट्यूशन है जिसको मनुष्य ने अपनी परस्पर भलाई के हेतु बनाया है। प्रत्येक मनुष्य को सृष्टिकर्ता ने स्वतंत्र उत्पन्न किया है। उन बन्धनों के अतिरिक्त जिनमें वह स्वयं अपनी इच्छा से पड़ जाता है दूसरा कोई बन्धन उसके लिये परमेश्वर की ओर से नहीं है। यद्यपि भूमि पर गिरते हो हम एक न एक प्रकार के बन्धन में पड़ जाते हैं, और ऐसा देख पडता है कि हम स्वतत्र नहीं हैं, तथापि सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर यह विदित होता है कि ये सब बन्धन हमने स्वयं अपने ऊपर लगा लिये हैं सोसायटी के नियम, सोसायटी के प्रबन्ध, सोसायटी की आज्ञा, हम अपने ऊपर माननीय समझते हैं, क्योंकि अपनी बुद्धि में अपनी भलाई हम इसी में समझते हैं, मानो इसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य जो किसी विशेष सोसायटी में प्रवेश करता है, बिना अपनी रुचि अरुचि प्रगट किए उन सब नियमों को स्वीकृत कर लेता है जो उस समय उस सोसायटी में प्रचलित होते हैं। परन्तु जहां कोई दूसरी सबल जाति तलवार के बल से वा राजनैतिक कौशल से एक अन्य देश में आकर उसको पराजित कर लेती है और उसको आधीन करके उसके लिये नियम बना देती है और उस पर शासन करती है, वहां यह कहना सर्वथा अनुचित है कि उस

गवर्न्मेंण्टको मनुष्योंने अपनी भलाई के लिये बनाया है। वरन् वह ऐसी दशा है जिसको उन्होंने अवश होकर अपने ऊपर स्वीकृत किया है। अतएव प्रत्येक अन्य जाति की गवर्न्मेंण्ट किसी अन्य देश या जाति के लिये निस्सन्देह सोशल इंसटिट्यूशन नहीं है वरन् एक अत्याचारी कार्य्य है जो उन की इच्छा के प्रतिकूल है सृष्टिकर्ता को एक जाति-विशेष के मनुष्य का एक समाज-विशेष में उत्पन्न करने से तात्पर्य यह है कि वे जिस समाज मे उत्पन्न हुए हों उसके हानि लाभ का विचार कर उसके लिये नियम बनावें और अपनी जन्म भूमि की रक्षा किसी अन्य जाति से करें। यदि इस भाव से देखा जाय तो किसी अन्य जाति के राज्य का चाहे वह कैसा ही अच्छा क्यों न हो सृष्टि नियम के अनुकूल होना कदापि सम्भव नही है। यदि एक मनुष्य का दूसरे मनुष्य को अपने आधीन करके दास बनाना सृष्टि-नियम तथा राजनियम विरुद्ध और दण्डनीय है, तथा सभ्य-परिपाटी वालों में असभ्य और अनुचित गिना जाता है, तो इसी भांति एक जाति का (जो कि मनुष्य विशेष के समुदाय को कहते हैं) दूसरी जाति को उस की इच्छा के प्रतिकूल पराधीन या परतंत्र करना अथवा उस पर शासन करना क्योंकर उचित तथा सभ्य माना जा सकता है। फिर सृष्टि अनुकूल भी कदापि नहीं हो सकता। यदि पराधीन जाति इस बात को नही विचारती तो इसका कारण यह है कि उनकी चिरकालकी पराधीनतासे उनके हृदय का यह पवित्र-भाव बुझ जाताहै और साहसकी न्यूनता तथा मानसिक विचार की लघुता उनको इस पवित्र सचाई के सोचने के भी अयोग्य कर देती है। इस उदाहरण को संमुख रख कर तो हमारा मन यही उत्तर देने को करता है कि किसी अन्य जाति का राज्यशासन हमारे लिये उचित और कल्याणकर नहीं हो

सकता और उसके लिये हमारी इच्छा प्रगट करना बुद्धिमत्ता से दूर है। यह इच्छा बहुत नीच श्रेणी की है और हमको मनुष्य-श्रेणी से गिराती है, हमारे मनोरथ-सिद्धि तथा साहस का प्रतिरोध करती है और हमको पशुओं की सी पराधीनता में डालती है। स्वजातीय पक्ष तथा मानुषी गौरव नीच इच्छा प्रगट करने की आज्ञा नहीं देता। परन्तु वर्तमान व्यवस्था को देख कर यह कहना पड़ता है कि वर्तमान गवर्नमेंएट हमारे लिये बहुत ही लाभदायक और कल्याणकारी है। अतएव हमें इसका शुभचिन्तक रहना चाहिए और हमारे जातीय कर्तव्य भी हमें यही बतलाते हैं कि हमारे देशोद्धार का मूल इस शुभचिन्तन पर निर्भर है। किन्तु जहां यह प्रश्न है कि तुम स्वजातीय शुभचिन्तक हो अथवा सरकार के, वहाँ हमारे लिये उत्तर सरल है। सरकार का शुभचिन्तन भी इसीमें है कि हम उसके साथ विश्वासघात न करें और यथार्थ बतलादें कि हम स्वजातीय अशुभचिन्तक नहीं बन सकते किन्तु सरकार के भी शुभचिन्तक रहेंगे, क्योंकि स्वजातीय शुभचिन्तना भी सरकार की शुभचिन्तना ही से है। परन्तु यदि हम स्वजाति चिन्तना के विरुद्ध सरकार की शुभचिन्तना का दम भरें तो समझ लेना चाहिए, कि या तो हम मिथ्यावादी हैं और हमारी बात पर विश्वास नहीं करना चाहिए अथवा हम प्रथम श्रेणी के नीच दुराचारी हैं और इस कारण फिर भी हमारे वचन विश्वासनीय नहीं हो सकते। क्योंकि जो पुरुष वर्तमान लोभवश अथवा जगत में अपने को प्रशंसनीय बनाने के अभिप्राय से स्वजातीय उन्नति को बेच कर स्वजातीय लाभ का प्रतारक कहाने का कलंक अपने सिर ओढ़ सकता है, उससे कुछ असम्भव नहीं कि वह एक सरकार को दूसरी सरकार के हाथ बेच भी ले; और जिस समय उसको अपने इस धर्माचरण से अधिकतर

लाभ की सम्भावना होगी तो शीघ्र वह अपनी शुभचिन्तना को विपरीत चिन्तना से बदल देगा। ऐसे अधम पापात्मा के लिये शुभचिन्तना कोई परम कर्तव्य नहीं, न इसकी शुभचिन्तना किसी सिद्धान्त पर स्थिर है। यह हृदय की सरलता से शुभचिन्तक नहीं है, वरन् शुभचिन्तना और अशुभचिन्तना उसके निकट मानो एक तराजू है जिस पर वह अपने लाभ हानि की तुलना करता है, और जिस ओर अधिकतर लाभ देखता है उसी ओर प्रवृत्त हो जाता है। ऐसे मनुष्य जब अपनी जाति को हानि पहुचाते हैं तो उनकी शुभचिन्तना से किसी दूसरी सरकार को भी कदापि लाभ नहीं हो सकता। उनकी शुभचिन्तना तो मानो उस तृण के सदृश है जो वायु वेग के आश्रित है। यहां पर यह सविस्तर वर्णन करना उचित जान पड़ता है कि हम स्वजातीय शुभचिन्तक होकर वर्त्तमान सरकार के शुभचिन्तक क्योंकर रह सकते हैं। इसके कई एक उपाय हैं। प्रथम कोई मनुष्य-जाति जबलों वह संसार की दूसरी मनुष्य जातियों के तुल्य सभ्यता तथा विद्या में निपुण न हो जाय, स्वतंत्र नहीं रह सकती और न हो सकती है। विद्या एक अलौकिक अद्भुत शक्ति है। जो मनुष्य-जातियां हम से विद्या में अधिकतर निपुण हैं वे अवश्य हमसे अधिकतर श्रेष्ट भी हैं। युद्ध तथा राजनीतिज्ञता में भी वे हमसे गुरुतर है। जैसे वैदिक तर्क वितर्क में वह पुरुष जीतता है जो अधिक विद्वान् होता है, वैसेही युद्ध में भी वही मनुष्य-जाति विजयिनी होगी जो अधिक बुद्धिमती तथा विद्याकुशल हो। संसार के इतिहास में अनेक ऐसे उदाहरण मिलेंगे जो इस बात की अङ्गपुष्टि करेंगे। रोम ने अपनी वृद्धि के दिनों में उन सब जातियों को पराजित कर लिया था जो कि मूर्ख और अपढ़ थीं। यूनान की उत्कृष्टता के समय भी ऐसा ही हुआ।

योरप की छोटी छोटी राजधानियों ने अपनी बुद्धिमत्ता से अफ़रिका और अमेरिका की सब प्राचीन जङ्गली जातियों को अपने आधीन कर लिया है। अभी थोड़े दिन हुए कि जापान जैसे छोटे राज्य ने अपने बुद्धि-बल से चीन जैसे प्राचीन बलवान राज्य को कैसा नीचा दिखाया। अङ्गरेजों का अधिकार भी यहां इस देश में विद्या तथा सभ्यता पर निर्भर है। जब अङ्गरेज यहां आए तो यहां मुसलमानों का राज्य था और यद्यपि यहां की कई छोटी छोटी राजधानियां भिन्न भिन्न प्रान्तों में स्वतन्त्र हो गई थीं, यदि अङ्गरेज न आते तो सम्भव है कि सम्पूर्ण भारतवर्ष में पुनः हिन्दू राज्य स्थापित हो जाता। किन्तु यह कदापि सम्भव न था कि यूरोपियन सभ्यता तथा उनके आधुनिक युद्धयन्त्रों के सन्मुख आर्य्य जाति विशेष ठहर सकती। मुसलमानों को युद्ध में आर्य्य जाति सदा वीरत्व से प्रतिउत्तर देती रही। भारतवर्ष के इतिहास में कोई शताब्दी ऐसी न बीती होगी जिसमें कि आर्य्यों ने स्वाधीन होने के लिये तलवार न उठाई हो। कभी विजयी होते कभी पराजित परन्तु उनकी वीरता आजकल के यूरोपियन शस्त्र के आगे कदापि कार्य्य कारिणी न होती। मुसलमानों ने आर्य्य जाति को पराजित इस कारण से किया कि उस समय उनकी जाति में विद्या सभ्यता तथा शस्त्रविद्या का प्रचार उत्तम श्रेणी का हो रहा था और धर्मपक्ष भी यथेष्ट से अधिक था। आर्य्य जाति इस कारण पराजित हुई कि धर्म की अवनति और मिथ्या बातों की वृद्धि ने इस जाति को युद्ध के अयोग्य बना दिया था। मुसलमान बादशाह विद्या से लाभ उठा प्रतिदिन अपना राज्य बढ़ाते चले गए। परन्तु साथ ही जब कभी इन लोगों ने केवल अपने पुरुषार्थ पर अभिमान करके काम लिया है, तो उसी क्षण वीर आर्यपुत्रों ने युद्ध में उनको अधोमुख

गिराया है, अतएव यह सम्भव था कि अठारहवीं शताब्दी में आर्य जाति मुसलमानी आधीनता से छुटकारा पाकर स्वाधीन हो जाती. जैसा कि पंजाब में सिक्ख और महाराष्ट्र देश में मरहट्टे हो गये थे। परन्तु जब हम इस बात को स्मरण करते हैं कि किस चिरकाल से यूरोपियन जातियां आर्यावर्त्त में अधिकार पाने के उद्योग में थीं, तथा उस समय भी तीन चार यूरोपियन जातिया अनेक अभिप्राय से आर्य्यवर्त के कई प्रान्तों में एक प्रकार का अधिकार जमाए हुईं थीं, तो हमें यह निश्चय हो जाता है कि परमात्मा की इच्छा भी इसी में थी कि उन सब यूरोपियन जातियों में से इङ्गलैण्डीय जाति इस प्राचीन पवित्र भूमि पर प्रभुत्व पाकर विद्या तथा आधुनिक सभ्यता का प्रचार करे।

विद्या, सभ्यता तथा स्वतन्त्र-सम्मति के प्रचार के लिये आवश्यक है कि उस देश में शान्तिभाव उपस्थित रहे। सरकार इङ्गलिशिया के अनुग्रह से हम इस शान्ति भाव को प्राप्त हैं और इस वर्तमान काल में उसी के कारण यह शान्ति भाव स्थिर रह सकता है इस समय पर्य्यन्त इस देश में जो कुछ विद्या और सभ्यता का प्रचार हुआ है, वह मानो कुछ नहीं है विद्या प्रचार अधिकतर सरकार की आवश्यकताओं पर निर्भर है परन्तु इस देश की विद्या प्रचार प्रणाली में बहुत से दोष हैं जिनका दूर करना जातीय अस्तित्व के लिये आवश्यक है। आर्यपुत्रों को अब यह सोच उत्पन्न हो चला है, और अभी यह सावकाश भी मिला है, कि अपने प्रयोजनों को विचार कर विद्या प्रणाली में उचित परिवर्तन करें। यह बात कदापि मिथ्या नही कि अभी इस देश में विद्याप्रचार का श्रीगणेश भीं नहीं हुआ। परन्तु ऐसे चिन्ह अवश्य देख पड़ते हैं जिनसे यह आशा भी अवश्य होती है कि अब प्रतिदिन शिक्षा की इच्छा यों ही प्रबल होती चली जायगी और लोग विद्याप्रणाली में उचित संशोधन करने में भी

योंही सयत्न रहेंगे। तृतीय, इस समय हम लोग केवल अंगरेजी गवर्न्मेंएट के आधीन ही नहीं हैं वरन अङ्गरेज़ी सभ्यता, अङ्गरेज़ी विद्या, तथा अङ्गरेज़ी मनुष्य बुद्धि-कौशल के अतिशय आश्रित हो रहे हैं और ये सब वस्तुएं हमको केवल अङ्गरेजी शासन की उपस्थिति में ही मिल सकती हैं। चौथे समस्त यूरोपियन जातियों में अङ्गरेजी शासन उत्तमोत्तम तथा कल्याणकर है और सबसे कम अन्यायी है। इसी प्रकार और भी अनेक कारण हैं जो हमको सरकार का शुभचिन्तक बनाते हैं। परन्तु यह बात अवश्य स्मरण रखनी चाहिए कि जाति की विपरीत चिन्तना से सरकार की शुभ चिन्तना कदापि नहीं हो सकती। हमारी बुद्धिमान गवर्न्मेंएट भी इस बात को भली भांति जानती है। हमको उचित है कि इस अवकाश को दुर्लभ जान विद्योपार्जन में उन्नति करें, विद्याप्रणाली में आवश्यकतानुसार परिवर्तन करें, तथा धर्मसम्बन्धी विषयोंमें समयानुसार परिशोधन करें और सर्वसाधारण में देशोन्नति तथा स्वतंत्र सम्मति का प्रचार कर इस प्रकार के सामान इकट्ठे करलें कि जिसमें कम से कम अपने जातीय निर्वाह की वस्तु के लिये अन्य जाति के मनुष्यों के बुद्धि-कौशल का आश्रय हमको न लेना पडे। यह भी स्मरण रखना अत्यावश्यक है कि स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिये पहिले पहल इन विषयों में स्वतन्त्र होना चाहिए—पहिले विद्या तथा शिक्षाप्रणाली में स्वतन्त्र होना चाहिए, दूसरे धर्मसम्बन्धी तथा सामाजिक विषयों में स्वतन्त्रता हो, तीसरे व्यापारिक स्वतन्त्रता और चौथे जातीय एकता प्राप्त हो; यद्यपि पहिले तीन विषयों में भी स्वाधीनता प्राप्त करने के लिये चौथी श्रेणी का बहुत कुछ काम पड़ता है, परन्तु जब लों पहिली तीन प्रणालियों में स्वतन्त्रता प्राप्त न हो ले चौथी श्रेणी कदापि प्राप्त नहीं हो सकती। इन चारों विषयों में

स्वतन्त्र होने के उपरान्त हम जातीय स्वाधीनता को प्राप्त हो सकते हैं। यह भी आप स्मरण रक्खें कि हमारी गवर्न्मेंएट बहुत बुद्धिमान है, सब ऊंच नीच को जानती है। ज्यों२ हम योग्यत दिखाते हैं, गर्वन्मेंएट भी हमको कुछ न कुछ अधिक स्वतन्त्रता अवश्य देती जाती है; क्योंकि गवर्न्मेंएट जानती है कि जो मनुष्य जाति उक्त चार विषयों में सफलता को प्राप्त हो जाती है, वह कदापि पराधीन नहीं रह सकती। परन्तु जब लों हम अपने कर्म तथा योग्यता से यह सिद्ध न कर दिखावें कि वास्तव में हम स्वतन्त्रता प्राप्ति में सयत्न हैं, तब लों स्मरण रखना चाहिए कि लाखों यत्न पर भी अंशमात्र अधिक स्वतन्त्रता हमें नहीं दी जा सकती। जिस समय गवर्न्मेंएट पर यह ज्ञात हो जायगा कि हम केवल स्वतन्त्रता ही दिए जाने के योग्य नहीं हैं, प्रत्युत स्वय स्वतन्त्रता प्राप्त करने में भी समर्थ हैं उस समय निस्संदेह कोई सांसारिक शक्ति हमको इससे वंचित नहीं रख सकती। इस लिये पहिला कर्तव्य यह है कि हम स्वतन्त्रता से लाभ उठाने, तथा स्वतन्त्रता पूर्वक अपने कामों को पूरा करने के योग्य बने। द्वितीय कर्तव्य यह है कि हम स्वतन्त्रता प्राप्त करने के यत्न सोचें। जो मनुष्य दासत्व से छुटकारा पाने तथा स्वतन्त्र होने का यत्न जानता है, उसे कोई भी दास नहीं रख सकता। सौभाग्य-वश सारे भारतवर्ष में एक गवर्न्मेंएट शासन कर रही है, तथा एकही राज्यभाषा सारे देश में प्रचलित है। ये दोनों बातें रेल, तार, तथा डांक प्रबन्ध की सहायता से जातीय एकता को बहुत कुछ अवसर दे रही हैं। यद्यपि हमारा देश बडी बुरी दशा में है, तथापि हमारे लिये वे कठिनाईयां नहीं हैं जो इटली में उस समय स्वदेशानुरागियों के लिये उपस्थित थीं। यदि स० १८६६ में महात्मा मेज़िनी ने यह परिणाम निकाला कि "उसके देशकी

की राजनैतिक शिक्षा यथोचित नहीं हुई थी", तो हमारी राजनैतिक शिक्षा तो अभी प्रारम्भ भी नहीं हुई है। हमारा देशोद्धार उपयुक्त शिक्षा पर निर्भर है। शिक्षा का प्रश्न एक बहुत बड़ा प्रश्न है, जिसकी ओर हमे पूरा ध्यान देना अत्यावश्यक है। किस रीति से शिक्षा दी जाय किस विषय की शिक्षा दी जाय, क्या क्या हमारी आवश्यकताएं हैं जो शिक्षा से दूर हो सकती हैं, और किस रीतिपर हम इन आवश्यकताओंको दूर करने के लिये शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन कर सकते हैं। येही प्रश्न ह जो बड़े दुसाध्य हैं और जिनके साधन में हमारे स्वदेशियों को यथा सम्भव उद्योग करना उचित है। परन्तु इन प्रश्नों की सिद्धि में जो जो कठिनाइयां आवें, उनके सहन करने के लिये हम सबको कटिबद्ध रहना चाहिए। जिन लोगों को अपने देशोद्धार की उत्कट इच्छा है, उन्हें अपने कर्तव्य कर्म्म, अपने विश्वास और अपनी दृढ़ता को सिद्ध कर दिखाना आवश्यक है। वे अपने आचरण व्यवहार द्वारा यह सिद्ध करें कि उनका विश्वास दृढ़ है अर्थात् अपने सिद्धान्त के साधन में वे हर एक कष्ट के सहन करने को प्रस्तुत हैं। जबलों हम यह न सीखेंगे कि भूखे मर के रुखे सूखे पर निर्वाह करके, मोटे वस्त्र पर गुजारा करके तथा साधारण मकानों में रह के हम स्वजातीय सेवा कर सकते हैं, जबलों हमें यह विश्वास न हो जाय कि संसार के, यावत् संभोगादि क्या, यह जीवन भी जातीय सेवा के लिये है, और कोई सांसारिक पदार्थ उसकी तुलना नहीं कर सकता, सारांश यह कि यावत सांसारिक पदार्थ से इसको जब तक हम गुरुतम न विचारें, तब तों हमारे लिये देशोन्नति-वाचक शब्द भी उच्चारण करना व्यर्थ है। हम मानते है कि जाति अभी इस उच्च भाव को समझने तथा उसके दाद देने के योग्य नहीं है; परन्तु जितने मनुष्य इसको

कुछ भी समझ सकते हैं, उन्हें उचित है कि इसकी भली भांति शिक्षा दें, तथा उसका प्रचार करें। जब लों यह शिक्षा मौखिक रहेगी तबलों कुछ भी उन्नति की आशा नहीं की जा सकती। हमारी मौखिक शिक्षा के साथ ही हमारा कर्म ऐसा श्रेष्ठ होना उचित है कि जो स्वतः उच्चतम प्रभाव उत्पन्न करे। स्वजातीय कर्तव्य पूरा करने में अवश्य ही बलिप्रदान किया जाता है। कितनेही सज्जन इस मार्ग में अपना जीवन दे देते हैं। आप स्मरण रक्खें कि उनका यह कृत्य वृथा नहीं जाता, वरन् एक प्रकार की आकर्षणिक शक्ति लोगों के हृदय में उत्पन्न कर देता है,जो कि मौखिक उपदेश से कहीं अधिक फल दिखाती है। किसी पबलिक काम में बहुत सा धन दे देना बलिप्र दान नहीं है। बलिप्रदान यह है कि हमारा तन मन धन सभी उस काम के लिये समर्पण हो तथा उसके पूरा करने में किसी दुख कष्ट की हमें परवाह न हो। जो काम हम करें उसमें स्वजातीय लाभ हानि को विचार लें। यदि देश मे थोडे मनुष्य भी विश्वास के ऐसे दृढ उत्पन्न हो जाय। तो निस्सन्देह स्वजातीय उन्नति की आशा-लता पुनः लहलहा उठे। इस गई अवस्था में भी भारतवर्ष ऐसे सज्जनों से शून्य नहीं है। मेरा अभिप्राय इस पुस्तक के रचने से यह है कि ऐसे ही उच्चतम बलिप्रदान का एक दृष्टान्त आपकी भेंट करूं और आपको दिखाऊं कि स्वदेशानुरागी क्या करते हैं, तथा किन किन कठिनाइयों से निज प्रतिज्ञा पालन अन्तिम समय पर्य्यन्त निभा ले जाते हैं। यदि इस छोटी सी पुस्तक को पढ़कर आपके हृदय में अंशमात्र भी स्वदेशानुराग, अथवा स्वजातीय सेवाका भाव उत्पन्न हो जाय, तो मैं अपने को अत्यन्त कृतार्थ और अनुगृहीत समझूंगा, और अपने परिश्रम को सफल होता देख गदगद हो जाऊंगा। हे परमात्मन्! तू हमारी सहायता कर,

कि हम स्वजातीय सेवा के कठिन मार्ग में कृतकार्य होना सीखें तथा ऐसे महात्माओं का आदर सत्कार करें और स्वयं उनके अनुगामी हो जातीय सेवा अपने जीवन का परम कर्तव्य तथा करणीय कर्म्म समझें ॥

ग्रन्थ कर्त्ता ।

महात्मा मेज़िनी का जीवनवृत्तान्त

जन्म तथा बालकपन की शिक्षा।

जोज़ेफ़ वा ग्वीसेप मेजिनी इटली देश के सूबे जेनोआ के एक गांव में ता० २२ जून १८०५ को उत्पन्न हुआ था। उसका पिता एक माननीय डाक्टरों में से था और अपने गांव में अनाटोमी का प्रोफेसर था। उसकी माता बड़ी बुद्धिमती, सुन्दरी, तथा सुशीला पत्नी थी। यद्यपि उसको अपने सब बच्चों से प्रेम था, परन्तु मेज़िनी उसे अत्यन्त प्रिय था। बालक पन में ही उसका स्नेह पूर्वक लालन पालन करती थी, क्योंकि उसे पहिले ही से भास गया था कि उसका यह पुत्र अवश्य एक असाधारण मनुष्यों में से होगा, जैसा कि प्रायः सभी माताओं को कभी कभी इस विषय में भविष्यत् वाणी सी हो जाती है। बालकपन में मेज़िनी बड़ाही दुर्बल तथा सुकुमार था, यहां तक कि जिस अवस्था में बालक दौड़ना तथा क्रीड़ा करना सीख लेते हैं, उस समय तक यह खड़ा भी न हो सकता था। उसके पिता ने एक आराम कुर्सी उसे बनवा दी थी, जिसपर वह अपनी माता के कमरे में बैठा रहता था। अनुमान ६ वर्ष की अवस्था में वह इस योग्य हुआ कि स्वत. चल फिर सके। फिर क्रमशः उसमें इतना बल आगया कि वह अपने पिता के पाइं बाग में जा सकता था।

प्रथम बेर जब उसकी माता उसे अपने संग बाहर ले गई तो एक अद्भुत घटना हुई, जो कि उसके जीवन में स्मरणीय रहेगी। अभी थोड़ी ही दूर वे गए थे कि मेज़िनी खड़ा हो एक वृद्ध अभ्यागत की ओर एकटक देखने लगा जो गिरजा की

सीढ़ियों पर वैठा हुआ था। वह उस समय ऐसा एकाग्रचित्त तथा अवाक हो गया था कि उसकी माता को यह भय उत्पन्न हुआ कि कदाचित वह उस वृद्ध कङ्गाल को देख भय खा गया हो। यह विचार कर वह उसे अपनी गोद में उठाने लगी। किन्तु होनहार वच्चा गोद से निकल भागा और वृद्ध अभ्यागत के गले से चिमट उसे प्यार करने लगा और अपनी माता से कहने लगा कि मा! इसे कुछ दे दीजिए। वृद्ध अभ्यागत के नेत्रों से अश्रु प्रवाह निकल पड़ा और प्रेम से गदगद हो वच्चे के सिर पर हाथ फेर उसने उसे अन्तःकरण से आशीस दिया, "पुत्री! तुम इस वालक के साथ सव से अधिक प्रेम करो, क्योंकि यह सर्वानुरागी होगा"। मेज़िनी की माता ने इस वात को प्रायः वहुत लोगों को सुनाया करती और प्रेम से गदगद हो नेत्रों में आंसू भर लाती। वालावस्था से ही उसे अभ्यागत दुखियों से अति स्नेह था। वह प्रायः ऐसे ऐसे लोगों के गले चिमट जाता था जिन्हें लोग स्पर्श करने से घृणा करते थे। जव कभी उसकी माता किसी भिखमंगे को भिक्षा न देती तो वह रोने लगता और वहुत फैल मचा के उसे कुछ न कुछ दिलवाही छोड़ता। सच है कि होनहार विरवान के होत चीकने पात। पुत्र के लक्षण पालने में ही देख पड़ने लग जाते हैं। जिस वालक की वाल्यावस्था में ही यह सद्गुण हो, वह वड़ा होने पर दुखित जाति का पक्षपाती और रक्षक क्योंकर न होता!

मेज़िनी वालकपन से ही असाधारण विचार शील तथा गम्भीर चित्त वृत्ति का था। साधारण खेल खेलौने से उसे कुछ भी प्रीति न थी। उसका पिता उसकी दुर्वलता के कारण उसे शिक्षा दिए जाने में अरुचि प्रगट करता। परन्तु मेज़िनी अभी चार वर्ष का भी होने न पाया था कि उसकी

माता को एक दिन पता लगा कि मेजिनी तो पढ़ना सीख गया। उसे अत्यन्त आश्चर्य हुआ और टोह लगाने पर ज्ञात हुआ कि मेज़िनी केवल बैठा श्रवण करता था जब कि उसकी वहिनें पढा करती थीं और इस भांति सुनता सुनता कुछ समयोपरान्त वह भी पढ़ना सीख गया। यदि किसी त्योहार पर उससे पूछा जाता कि उसे कौन सी वस्तु प्रिय है जो वह लिया चाहता है. तो वह अपनी रुचि पुस्तक लेने की प्रगट करता। मेजिनी को कहानियां सुनना अति प्रिय था। परन्तु एकही कहानी पुनःकदापि नहीं सुनता। बीमारी की अवस्था में बड़े धीरज से रहता। जब वह पांच वर्ष का था तो उसके यहां उसका मामा एक दिन आया। उसने देखा कि बालक बड़ा दत्तचित्त हो नकशों को देख रहा है और उसके चारो ओर पुस्तकें पड़ी हैं। इस घटना से उसके हृदय में एक अद्भुत भाव उत्पन्न हुआ और कुछ कालोपरान्त उसने अपनी वहिन को एक पत्र में लिखा कि यह बालक अवश्य एक प्रतिष्ठित पुरुषों में से होगा तथा इसकी गिनती उन महापुरुषों में होगी जो समय समय पर इस ससार में प्रगट होते रहते हैं और अपनी चैतन्यता तथा तीव्र वुद्धिवल से सारे संसार में आदर सत्कार के भागी होते हैं। मेज़िनी के विषय में यह भविष्यत वाणी ऐसी ठीक उतरी कि मानो उसके मामा को किसी ने पहिले से भली भांति विश्वास दिला दिया हो।

पहिले पहल मेजिनी ने एक वृद्ध पादरी से शिक्षा पाई जिसने उसे केवल लेटिन भाषा की शिक्षा दी। परन्तु मेज़िनी को पढ़ने से ऐसा शौक था, और उसकी वुद्धि ऐसी तीक्ष्ण थी कि जिस पुस्तक को वह उठा लेता उसको अन्त तक पहुंचा के तब छोडता। उसके पिता के पुस्तकालय में फ्रेंच रेवो-लुशन के विषय की कई पुस्तकें थीं। उसने बड़े ध्यान से उन

सब पुस्तकों को बालकपन ही में पढ डाला था। तेरह वर्ष की अवस्था में वह जेनोआ यूनिवर्सिटी में भेजा गया, जहां उसका बड़ा सत्कार हुआ। मेज़िनी के साथी उसे अत्यन्त प्रसन्न रखते थे और साथही उसका आदर सम्मान भी करते थे, क्योंकि वह स्वभाविक उदार और दयाशील था और ऐसा सरल चित्त था कि अपने व्यय में से बचा कर किसी किसी विद्यार्थी की सहायता करता। कभी कभी अपने वस्त्र उतार उन लोगों को दे देता था। इसी समय अपने देश की अवनति तथा विदेशियों का अत्याचार देख वह अत्यन्त दुखित हुआ। और इसी समय से यावत् सांसारिक निज सुख संभोगादि का परित्याग कर सदा काला वस्त्र पहिरना उसने ग्रहण किया। उसकी माता को यह सब लक्षण देख यह भ्रम उत्पन्न हुआ कि वह कहीं प्राणघात न करले। इस भांति मेज़िनी को स्वदेशानुराग की शिक्षा विद्योपार्जन के साथ ही मिली, और उसने यावज्जीवन इस शिक्षा को स्मरण रक्खा और उसके अनुकूल वह कार्य करता रहा। कुछ काल तक अनाटोमी तथा वैद्यक पढ़ता रहा। इस विद्या में उसने बड़ी उन्नति की। कई अवसरों पर अपने पिता के लेक्चर स्वयं लिखा देता था। परन्तु शीघ्रही उसने यह जीवन मार्ग तज दिया। चीर फाड़ से उसे ऐसी घृणा हुई कि वह प्रायः बीमार पड़ने लगा। इस कारण डाक्टरी का ध्यान छोड़ वकालत की ओर झुका। साहित्य उसे अति प्रिय था। तेरह वर्ष की अवस्था में उसके लेख ऐसे ज्ञानोत्पादक होते थे कि जेनोआ शहर की एक विद्यासम्बन्धी सभा ने मेज़िनी को, यद्यपि अभी वह बालक था, सभासद नियत किया। इस संसार में प्रायः लोगों को अपने मन के विरुद्ध कार्य करना पड़ता है और ऐसे फेर में पड़ जाते हैं कि अवश हो अपने विचारों के प्रतिकूल करते हैं। सच कहा है

कि मनुष्य अपने अवकाशों के आश्रित होता है। यद्यपि मेज़िनी को साहित्य से प्रीति थी और स्वयं वह एक साहित्यानुरागी मनुष्य हुआ चाहता था, किन्तु अनावकाशवश उसे वकालत ही सीखना पड़ा पांच वर्ष की शिक्षा उपरान्त मेज़िनी को डिगरी मिली और उसे वकालत का लाइसेन्स प्राप्त हुआ। उसके माता पिता उसको इस कृतकार्यता पर गदगद हो विचारने लगे कि बेटा अब वकील बन गया और अब भली भांति द्रव्य उपार्जन करेगा, तथा प्रतिष्ठा को प्राप्त होगा। उनको क्या अनुमान था कि बेटा अपने ओर से बिलकुल बेपरवाह है। हां, अवश्य वह जातीय वकील बनेगा और संसार में एक अक्षय कीर्ति छोड़ जायगा। कोई बड़ा धनाढ्य वकील अपनी प्रशंसा बढाने के अभिप्राय से अपना सर्वस्व किसी पबलिक काम में दे दे, परन्तु तो भी इसके तुल्य कदापि नहीं हो सकता। जिस श्रम से उसने यह प्रतिष्ठा प्राप्त की वह दूसरे मनुष्य कदापि सहन नहीं कर सकते। जिस समय का हम वर्णन कर रहे हैं, उस समय इटली में यह चलन थी कि प्रत्येक वकील को पहिले दो वर्षों में विना फ़ीस वकालत करनी पड़ती थी और निर्धन अभ्यागतों के मुक़द्दमे लड़ने पड़ते थे। मेज़िनी ने कुछ समय तक यह काम किया और अपनी योग्यता तथा बुद्धिबल से पूर्णतया प्रसिद्ध हो गया, यहां तक कि प्रत्येक पुरुष की यही इच्छा होती कि मेज़िनी को अपना वकील करें। परन्तु मेज़िनी को न तो वकालत की लालसा थी और न प्रशंसा की कामना। उसे तो और ही धुन लग रही थी।

उस समय इटली में एक गुप्त सभा थी, जिसे लोग "कारबोनरी" कहते थे। उसका प्रधान कर्तव्य गवर्नमेंएट का विरोध करना था और अवसर पड़े पर उसके सभासद गव-

मैंएट के विरुद्ध बलवा करा देते थे। मेजिनी भी इसका सभासद हो गया और यद्यपि उसे इस सभा के गुप्ताचरण रुचिकर न थे, किन्तु इसके सदृश कोई और सभा न होने के कारण उसको उसमें रहना पड़ा। इस समय उसमें यह सामर्थ न थी कि स्वयं एक सभा बना लेता। इन्हीं कारणों से अपनी रुचि के विरुद्ध वह इसका सभासद बना रहा। इस सभा में उसको ऐसे मनुष्यों से सम्बन्ध पड़ता रहा जो यद्यपि उच्च मानसिक भाव के न थे, परन्तु अपने इच्छानुसार कार्य अवश्य करते थे। उनको न तो देश से निकाले जाने का और न मृत्यु का डर था और प्रतिज्ञा और दृढ़ता के ऐसे पक्के थे कि निष्फलता से कदापि निराश नहीं होते थे। एक ताना टूट गया तो दूसरा तन लेते थे। मेजिनी चार मनुष्यों से मिल कर कार्य करने का फल भली भांति समझता था और इसी कारण सभा समाजों में रह कर काम करना अति उत्तम जानता था। प्रत्येक सभासदों से आज्ञा प्रतिपालन की प्रतिज्ञा करा ली जाती थी। मेम्बरों को इतना अधिक चन्दा देना पड़ता कि मेजिनी जैसे ग़रीब के लिये वह एक दण्ड के समान हो जाता और वह कदापि उसे नहीं दे सकता था। मेज़िनी का यह मत था कि किसी बुरे काम के हेतु धन संचय करना पाप है। जब हमें यह ज्ञान हो कि हमारे धन से अमुक पुण्य कर्म पूरा हो सकता है, तब यदि न दें तो अधिकतर पाप के भागी बनते हैं। मेज़िनी इस सभा से प्रसन्न नहीं था। क्योंकि वह यह सोचता था कि जो सभा अपने देशोद्धार के लिये अन्य मनुष्य जाति पर आश्रित है, वह कदापि स्वतन्त्रता को प्राप्त होने के योग्य नहीं। उसे पूर्णतया विश्वास था कि जो मनुष्य-जाति अपने बाहुबल से स्वतंत्रता प्राप्त नहीं कर सकती, वह कदापि स्वतंत्र नहीं हो सकती और यदि कहीं स्वतंत्रता प्राप्त

कर भी ले तो वह स्वतंत्रता कदापि बहुत काल तक नहीं रह सकती।

मेज़िनी का पकड़ा जाना तथा कैद होना।

जून सन् १८३० से कुछ कालोपरान्त इस सोसाइटी ने मेजिनी को एक विशेष कार्य पूरा करने के लिये नियत किया। परन्तु पुलिस पर यह भेद प्रगट हो गया और मेज़िनी पकड़ कर किले सवोना में बन्द किया गया। उसका पिता जेनोआ के प्रधान कर्मचारी के निकट गया और उससे पूछा कि उस के पुत्र को किस अपराध में यह दण्ड मिला है। उसे उत्तर मिला कि—

"तुम्हारा पुत्र ऐसा होनहार युवा है जो प्रायः रात्रि को अकेला घूमा करता है और किसी को नहीं बतलाता कि वह क्या सोचता है। गवर्नमेंट ऐसे युवा जनों को नहीं पसन्द करती जिनके आचरण व्यवहार इस भांति गुप्त हों।"

इस बन्दीगृह में वह अकेला बन्द किया गया। काउन्टेन्स ई० मार्टिनेनगो सिज़ेरेस्को लिखती हैं कि—

"मेज़िनी कारबोनारी होने के पश्चात् पकड़ा गया और सवोना के किले में बन्द किया गया। यह घटना मानो उसके जीवन में एक प्रधान मार्गपरि-वर्तक हुई। इस घटना के पूर्व वह सीखता था और इसके पश्चात् वह सिखाने लगा। अपने बन्दीगृह से वह समुद्र, आकाश, आल्पस पर्वत तथा प्रकृति की शोभा देखा करता। माहीगीरों का शब्द उसे सुन पड़ता पर वह उन सबको देख नहीं सकता था। एक पलुआ गोल्ड-फिंच बन्दीगृह में उसका साथी था। अपने मिशन में दृढ़ प्रतिज्ञा का उत्पन्न होना उसके चित्त में इसे एकान्त तथा शान्त स्थान में हुआ था।"

एक महीने उपरान्त उसको तीन पुस्तकें पढ़ने को दी गईं। इन में से एक तो अंजील, दूसरी बायरन के पद्यमय काव्य थे। घर से चलते ही समय उसे भास गया था कि कदाचित वह पकड़ लिया जाय। इसलिये उसने चिट्ठी पत्र का एक अनुठा नियम निकाला जिससे साधारण कुशल क्षेम के पत्र से सारे हाल का पता लग जाता था। इसी चिट्ठी द्वारा कारागार में उसे पता लगा कि उसके वन्दी होने से सभा में कोलाहल मच गया है। अतएव उसने यह युक्ति लगाई कि जिसमें सभासदों में इस समय उत्साह उत्पन्न हो जाय। किन्तु वह अपनी युक्ति में निष्फल रहा। फिर इसी कारागार में उसे यह सूझी कि इटली को विदेशी राज्य से स्वतन्त्र करना चाहिए, तथा परस्पर द्वेष को मिटा देना आवश्यक है। क्यों कि वह सोचता था कि इन्हीं कारणों से इटली इस समय ६ राजधानियों में विभाजित हो रही है। यही नहीं वरन उसने यह भी विचारा कि इटली को पोप के पंजे से छुटकारा दिलाना भी परम आवश्यक है, जिसने कि सारे देश को मिथ्या पक्षपात तथा अज्ञानता में गिरा रक्खा है, और जिस का संशोधन किए विना किसी प्रणाली में उन्नति करना कदापि सम्भव नहीं। सारांश यह कि उसके तीन उद्देश्य थे अर्थात् राजनैतिक तथा धार्मिक स्वतंत्रता और एकता, जिनके पूरा करने के लिये वह एक सोसाइटी संस्थापित किया चाहता था। मेज़िनी गुप्त भाव से कोई काम करना बुरा समझता था। परन्तु समयानुसार राज-विद्रोही होने के कारण उसे गुप्त आचरण रखना पड़ता था। इस कारागार में पड़े २ वह यही सोचता रहता था कि इस नवीन सभा के नियम किस प्रकार के होने चाहिएं। इसके सभासद किस प्रकार के मनुष्य होने चाहिएं तथा किस उपाय से इस सभाको यूरोप

की दूसरी ऐसी ही सभाओं से परिचित कराना चाहिए। यही प्रश्न थे जिनके मथन करने में वह रात दिन निमग्न रहता। अन्त में उसने यह निर्णय किया कि (१) इस सभा का नाम "यङ्गइटली" रक्खा जाय, (२) इसके अभिप्राय अथवा उद्देश्य पब्लिक हों, (३) इसके सभासदों से कोई ऐसी सशपथ प्रतिज्ञा ले ली जाय जिससे उन पर यह ज्ञात रहे कि उन्हे किन मनुष्यों अथवा किस मत का अनुगामी होना है, (४) जो मनुष्य इसके सभासद हों उन्हें यह प्रथम विचार लेना अत्यावश्यक है कि उनको देशके स्वतन्त्र होने, तथा सारे देश में एक लोक-पालित राज्य स्थापित करने में हर एक दुःख भोगने को प्रवृत्त रहना पड़ेगा; (५) इस सोसाइटी का यह भी मुख्य कर्तव्य होगा कि सभासद-गण इटली में विद्या का प्रचार फैलावें कि जिसमें वहां के लोग विद्या-निपुण हो स्वयं चैतन्य हो जांय और स्वाधीनता प्राप्त करने में सयत्न रहें, और किसी सोसाइटी अथवा जाति की सहायता के आश्रित न रहें।

मेज़िनी पर यह पहिले ही से विदित था कि उसकी जाति यद्यपि अभी अज्ञानता की घोर निद्रा में है तथापि बिलकुल मृतक भी नहीं हो गई है, और यदि एक बेर चैतन्य करके उसमें स्वजातीय अनुराग और उत्साह उत्पन्न कर दिया जाय और फिर स्वजातीय उत्साह से अपील की जाय, तो सफलता केवल सम्भव ही नहीं वरन् निश्चित है। मेज़िनी की बुद्धिमत्ता इसीसे प्रगट होती है कि वह यह पहिचान गया कि जातियां सदा अपने ही पुरुषार्थ से उठती हैं, तथा अपनी ही मूर्खता से पद दलित होती हैं। जो जातियां अपने पुरुषार्थ तथा सङ्कल्प में दृढ रहती हैं, और न कठिनाइयों को देखती हैं और न समय कुसमय विचारती हैं, वे अवश्यमेव सफलता

को प्राप्त होती हैं। धनिक तथा उच्च पदाधिकारी पीछे से उन का साथ देते हैं, परन्तु ऐसे सिद्धान्त के सिद्धयर्थ काम प्रारम्भ कर देना कदापि उनसे सम्भव नहीं। मेज़िनी को पूर्ण विश्वास था कि एकता तथा लोक पालित राज्य दो ऐसे उपाय हैं जिनसे जाति अवश्य उन्नति को प्राप्त होगी। यह विचार इन्हीं दोनों प्रणालियों में उन्नति करना उसने अपनी नवीन सोसाइटी का मुख्य कर्तव्य माना। एक अंग्रेज़ी लेखक यों लिखता है कि "यद्यपि मेज़िनी को इटली से अधिक प्रेम था, किन्तु केवल इटली के प्रेम ही से उसका हृदय सीमाबद्ध नहीं था। वह एक उच्चतम श्रेणी का मनुष्य था। वह इटली को सारे यूरोप में अगुआ बना कर प्रत्येक मनुष्य जाति की उन्नति का संकल्प मन में किए हुए था।" मेज़िनी के धार्मिक भाव भी ऐसे ही गुरुतम थे और धार्मिक परतंत्रता से उसे वैसी ही घृणा थी जैसी राजकीय परतन्त्रता से। वह पोप के अत्याचारों को बड़ी घृणा की दृष्टि से देखता और उसकी उत्कट इच्छा थी कि उसकी जाति इस धार्मिक परतन्त्रता से छुटकारा पावे।

देश निकाला।

६ महीने बन्दी रहने के उपरान्त उसे देश निकाले का दण्ड मिला और मेजिनी इसलिये फ्रान्स चला गया। लेविंज में भी देश बहिष्कृत मनुष्य बसते थे। उन्हीं के साथ मेज़िनी भी जा मिला। लूई फ़िलिप शाह फ्रान्स की सहायता पर ये लोग इटली के किसी भाग पर आक्रमण किया चाहते थे। परन्तु जिस आशा पर इन लोगों ने ये मनसूबे बांधे थे, उस आशा की शीघ्रही कलई खुल गई और वे अपने मिथ्या भ्रम से निराश हो बैठे। लूई फ़िलिप ने एक सूचना इस बात की

दी कि जो लोग मेरे राज्य में शरण लेकर दूसरे मित्र राज्यों के शान्ति भाव में विघ्न डालेंगे वा डालने का यत्न करेंगे, उनके साथ फौजदारी नियमानुसार वर्ताव किया जायगा। अब मेज़िनी को यहां से भी भागना पड़ा और मासल्स में आश्रय लेना पड़ा। यहां से अपने देश के साथ चिट्ठी पत्री जारी रक्खी। यहां से मानो उसने यङ्ग 'इटली' सभा की नींव डाली और इसी नाम का एक पत्र जारी किया। इस सोसाइटी के मेम्बरों ने परस्पर सशपथ यह प्रतिज्ञा की कि चाहे जो हो, इटली को एक सम्मत तथा स्वतन्त्र करने में सदा सयत्न रहेंगे और आवश्यकता पड़ने पर जान तक लड़ा देंगे। प्रत्येक मेम्बरों ने निम्न लिखित प्रतिज्ञा की—

"परमेश्वर के नाम पर, तथा इटली और उन सज्जनों के नाम पर, जो अपनी जातीय सेवा में बलिप्रदान हुए हैं. उन कर्तव्यों के नाम पर जो मुझे इस भूमि के साथ करने हैं जिस में परमात्मा ने मेरा जन्म दिया है, उस शुद्ध प्रेम के नाम पर जो यावत् मनुष्य को अपनी जन्मभूमि से होता है और जो मुझे इस भूमि से है जहां मेरी माता उत्पन्न हुई हैं और जो मेरे बच्चों का जन्मस्थान होगा, उस आन्तरिक घृणा के नाम पर जो प्रत्येक पुरुष को अन्यायी अनुचित शासन से होती है, उस लज्जा के नाम पर जो मुझे यह विचारने से होती है कि मुझे स्वतन्त्रता के यावत् अधिकार प्राप्त नहीं हैं और मेरे देश का कोई स्वजातीय झंडा नहीं है, उस उत्कट इच्छा के नाम पर जिससे मेरा हृदय स्वतन्त्रता के लिये परिपूर्ण है और जिसको हमलोग पराधीनता के कारण प्राप्त नहीं कर सकते, अपनी स्वजातीय गत महत्व तथा वर्तमान अवनति के नाम पर इटली देश की उन माताओं के विलाप के नाम पर जिनके बच्चों ने वन्दीगृह वा देशनिकाले में अपने

प्राण दे दिये हैं और परमात्मा की सृष्टि के असंख्य जीवों की आपत्तियों के नाम पर उस मिशन पर पूर्ण आशा रखता हुआ जो परमेश्वर की ओर से इटली को सौंपा गया है और इस बात पर विश्वास रखता हुआ कि इटली के प्रत्येक बच्चे को उचित है कि उस मिशन के पूरा करने में यथाशक्ति यत्न करे, और इस बात पर दृढ़ विश्वास रखता हुआ कि जब परमेश्वर की इच्छा किसी जाति की वृद्धि करने की होती है तो वह सर्व शक्तिमान निस्संदेह इसके पूरा होने के लिये उपाय बना देता है, और यह भी मानता हुआ कि यह उपाय प्रत्येक मनुष्य के हस्तगत है, यदि वह इन उपायों को समुचित रीति पर करे तो सफलता अवश्य प्राप्त हो, इस बात पर दृढ़ विश्वास रखता हुआ कि परोपकार यही है कि मनुष्य सदा सयत्न रहे, और पुरुषार्थ इसी में है कि दृढ़ता को हाथ से न जाने दे,–मैं "यङ्ग इटली" नामक सभा में अपना नाम लिखवाता हूं और आशा करता हूं कि मेरा काल सदा इसी उद्योग में व्यतीत होगा कि इटली को स्वतन्त्र करूं, तथा उसे पराधीनता से छुड़ाऊं, यथाशक्ति मेरा परिश्रम इसी में होगा कि इटली देश में इस सिद्धान्त की शिक्षा का प्रचार करूं और उसे एक सम्मत तथा सत्कर्म होने का उपदेश दूं क्योंकि यही दो ऐसे प्रबन्ध हैं जिनसे स्वतन्त्रता को प्राप्त हो सकते हैं। मैं किसी और सभा में न शामिल हूंगा और सर्वदा उन आज्ञाओं का प्रतिपालन करता रहूंगा जो मेरे भाई सहयोगी इस विषय में मुझ पर जारी करेंगे। मैं इन आज्ञाओं को अपनी जान जोखिम में डालकर भी गुप्त रक्खूंगा और सदा अपने भाइयों की सहायता करता रहूंगा। यदि मैं अपनी इन प्रतिज्ञाओं के प्रतिपालन में मिथ्यावादी ठहरूं तो परमेश्वर मुझे इसका बुरा फल दे और मैं संसार के तिरस्कार का उपयुक्त ठहरूं"।

सबसे पहिले मेज़िनी ने यह प्रतिज्ञा की। प्रायः लोगों ने कुछ कालोपरान्त उसका साथ छोड़ दिया और उसे धोखा दिया। परन्तु मेज़िनी ने यावज्जीवन अपनी प्रतिज्ञा का उल्लंघन न किया। मेज़िनी ने एक 'यङ्ग इटली' नामक पत्र जारी किया जिसके द्वारा अपनी धार्मिक तथा राजनैतिक शिक्षा का वह प्रचार करता रहा। इस पत्र की बहुत सी कापियां इटली भेजी जाती थीं जहां लोग इसे बड़े हर्ष पूर्वक पढ़ते थे, वरन् इसी के कारण अपनी जान जोखिम में डाल देते थे। इटली में भी गुप्त छापेखानों के द्वारा इसके प्रायः लेख प्रकाशित होते रहते थे। बहुतेरे युवकजन इस सभा में शामिल होने लगे और ये ही लोग गुप्तभाव से इस पत्र की कापियां सबको पहुंचा आते, तथा दूसरे युवकजनों को इस सभा में सन्नद्ध होने के लिये प्रस्तुत भी करते। अकस्मात् इन्हीं दिनों में इटली के कई स्थानों में बलवा हुआ। रोम वाले पोप के अत्याचार से दुखित तो थे ही, इस अवसर को दुर्लभ जान बहुत से मनुष्य एकत्र हुए, और उन्होंने बलवा कर दिया। देखा देखी और कई स्थानों में बलवा खड़ा हो गया, और यद्यपि इन उपद्रवों के कारण नहीं मालूम हुए थे, किन्तु स्वतन्त्रता की इच्छा ऐसी प्रबल होती गई, कि बीस दिन के समय में लगभग २५ लाख मनुष्यों ने पोप तथा आस्ट्रिया के अनुचित शासन से अपने आप को स्वतंत्र कर लिया और अपने दूसरे भाई बन्धुओं को स्वतन्त्र करने के लिये मरने मारने पर कटिबद्ध हो गए। परन्तु भूल उनसे यह हुई कि उन लोगों ने इस जातीय महाकार्य को प्रान्तिक बना दिया। स्वतंत्र सूबों की नवीन स्थापित गवर्न्मेंएट ने फ्रांस के वाक्य पर बहुत कुछ भरोसा किया और केवल अपने अपने सूबे के प्रबन्ध में सयत्न रहे, यह विचार कदापि नहीं किया कि आस्ट्रिया के समान

प्रवल राज्य के सन्मुख ऐसे छोटे छोटे राज्य क्या कर सकते हैं, अर्थात् इस अवसर पर पक्षपात ने एक जातीय प्रवन्ध की सफलता को शंका में डाल दिया और अन्तिम परिणाम इन सब उपद्रवों का वृथा गया। इन उपद्रवों के समय जो जातीय उत्साह तथा एकता का प्रादुर्भाव हुआ था, वह सब फलीभूत नहीं हुआ और प्रत्येक सूबे के लोग अपनी परस्पर लाभ हानि के सोच में पड़ गए और राजा की मिथ्या सहायता पर आश्रित हो वैठे।

इस अवसर को मेज़िनी तथा उसके साथी दुर्लभ जान रात दिन परिश्रम करते थे और एक पल भी वृथा न गँवाते थे। वे लोग स्वयं लिखते थे, तथा स्वयं उसकी नकल उतारते; जो विदेशी उस शहर में होते उनसे भेंट करते थे; इटली के मल्लाहों में स्वतंत्रता के मानसिक भाव का प्रचार करते; छपे हुए पत्रों के वन्डिल वनाते। सारांश यह कि कभी तो फ़िलोसोफ़र की कुर्सी पर और कभी कुली के भेष में रात दिन अपने उद्यम में प्रवृत रहते, और इस आशा पर जीवित थे कि कभी तो हमारा परिश्रम फल देगा। सब लोग परस्पर भाइयों के समान वर्ताव रखते। ये लोग अत्यन्त कष्ट से अपना जीवन निर्वाह करते थे, क्योंकि किसी प्रणाली से इन सब के आय की कुछ सूरत नहीं देख पड़ती थी, और जिस किसी के पास जो कुछ था भी, वह सब जातीय सेवा के अर्पण हो चुका था तथापि वे लोग अति संतुष्टता से रहते थे और किसी प्रकार की निन्दा जिह्वा पर भी नहीं लाते थे। मेज़िनी एक स्थान पर यों लिखता है कि "मैंने ये दो वर्ष बडी आपत्ति में परन्तु देश भक्ति में व्यतीत किए। चारो ओर से शत्रुओं ने घेर रक्खा था और सदा हम लोगों को अपने प्राण रक्षा की लगी रहती थी वरन् अपने ही दल में प्रायः किसी किसी पर शंका

करने लग जाते थे। परन्तु जो लोग दत्तचित्त हो अपने काम में लगे रहे, उन लोगों ने देश में एक आदर्श इस बात का खड़ा कर दिया कि हमलोग जो काम करते हैं, निज लाभ हानि के हेतु नहीं करते। अपनी जाति के नाम पर दु:ख भोगते हैं, तथा सुख और लाभ तो पहिले ही से जाति के समर्पण कर चुके हैं" वह सोचते थे कि ऐसा करना उनका परम कर्तव्य है और निज कर्तव्य न करना पाप है। एकही वर्ष में 'यङ्गइटली' सारे देश में प्रतिष्ठित तथा प्रशंसनीय सभा गिनी जाने लगी और उसके सब सिद्धान्त माने जाने लगे। इस सभा की उत्कृष्टता यहां तक पहुंची कि इससे सात राजधानियां सदा भयभीत रहती थीं और सदा उसके विनाश की युक्ति सोचा करती थीं। यद्यपि 'यङ्ग इटली' तथा उसके पृष्टपोषक बड़ी सावधानी से काम करते, पर राज्य-पदाधिकारियों को इनके काम काज का अनुसन्धान लगही गया और उनके पत्र तथा मुद्रित लेखों के पकड़ने के लिये बडे बड़े उपहार पुरस्कार नियत किए गए, और यह सूचना दी गई कि जो मनुष्य उन पत्रों का इटली में प्रचार करता पाया जायगा, उसको प्राणदण्ड मिलेगा। पेड-माण्ट के बादशाह चार्लस अलबर्ट ने यह सूचना दी कि जो मनुष्य इन अपराधियों का अनुसन्धान न लगाएगा, अथवा जो जानकर उनको वर्त्तमान सरकार के समीप न धर लावेगा, उसको जुरमाने के अतिरिक्त दो वर्ष कैद का दण्ड मिलेगा। भेदियों के लिये पारितोषिक नियत किया गया। सारांश यह कि गवर्न्मेंण्ट की ओर से वैरभाव प्रति दिन बढ़ता ही गया। इस वैरभाव का बढ़ना ही मानो उस युद्ध का मूल है जो मेज़िनी यावज्जीवन लड़ता रहा। निदान जब इन यत्नों से गवर्न्मेन्ट इटली थक गई तो उसने फ्रांस की गवर्न्मेन्ट से सहायता चाही। फ्रांस गवर्न्मेन्ट ने उसे सहायता देनी स्वीकार

की। आगे आगे मेज़िनी पीछे पीछे पुलिस फिरती रही, पर मेज़िनी उनके चंगुल में न आया। एक दिन पुलिस वहां घुस आई जहां मेजिनी लुका था, परन्तु उसके एक मित्र ने, जो ठीक उसीके समान रंग रूप वाला था, अपने आप को पुलिस के हवाले कर दिया और असल मेजिनी पुलिस के बीच में से होकर निकल गया। मेज़िनी ने स्वीज़रलैंएड जा कर शरण ली और इटली पर आक्रमण करने के लिये वहीं सेना एकत्रित करने लगा। परन्तु इस कार्य में वह अपने जंगी सहायक जेनरल रानारिनु के विश्वासघात के कारण निष्फल रहा और चार्ल्स ने इन लोगों को बड़ी हानि पहुंचाई। यों तो मेज़िनी के बहुत से सहायक मित्र कैद हो गए थे, पर उसका एक अन्तरंग मित्र पकड़ गया था. जिसके सोच से मेज़िनी को अत्यन्त दुःख होता था। इस युवा पुरुष को बड़ी बड़ी यमयन्त्रणा दी जाती थीं। उन लोगों को यह ज्ञात तो था ही कि मेज़िनी को इससे विशेष प्रेम है, इसलिये उन लोगों ने मेज़िनी का एक जाली हस्ताक्षर बना के उसे दिखलाया, जिस का तात्पर्य यह था कि मेज़िनी ने उन सब लोगों का परिचय भली भांति दे दिया है जो इस काम में सन्नद्ध थे। यद्यपि वह स्वयं इस धोखे में न आया, पर मेज़िनी की ओर से निराश हो प्राणघात करके मर गया। मेज़िनी के सच्चे प्रेम में उस की मृत्यु से कुछ भी अन्तर न पड़ा और उसने अपने जीवन पर्य्यन्त उसी तरह उस को याद रक्खा। ग्यारह वर्ष उपरान्त उसने एक पुस्तक लिखी, जिसमें इन सब महापुरुषों का जीवन चरित दिया। इस समय उसको लोग यह समझाने बुझाने लगे कि तू अब इस जीवन मार्ग को छोड़ दे। और इसी कारण लोग उसे दोषित भी ठहराने लगे, क्योंकि उन दिनों एक न एक मनुष्य प्रति दिन कैद किया जाता था। फिर आस पास

की स्वतंत्र राजधानियों ने स्वीज़रलैण्ड गवर्न्मेन्ट को भय देना प्रारम्भ कर दिया। उधर उन लोगों के युद्ध का सामान तथा रुपया भी घट गया। बहुतेरों के पास तो जीवन निर्वाह के लिये भी कुछ न बचा था। परस्पर विरोध का भी प्रारम्भ हो गया। सारांश यह कि उन लोगों को चारो दिशा से नैराश्य ही नैराश्य देख पड़ने लगा। पर मेज़िनी तनिक भी न घबड़ाया और अपने काम में पहिले ही के समान प्रवृत्त रहा। ये सब आपत्तियां मेज़िनी को निज कर्तव्य के मार्ग से न हटा सकीं। उसकी दुखी माता का दु:ख भी उसके चित्त को चलायमान न कर सका और वह सदा यही कहता रहा कि जिन लोगों ने देशोद्धार के हेतु जान तक दे देना स्वीकृत कर लिया है, उन्हें निराश कदापि नही होना चाहिए। सहन करना, सहन करने का उपदेश करना, तथा समस्त दल को सहन करने में अभ्यस्त करना उनका परम कर्तव्य है।

नये कार्य्य।

मेज़िनी को यह विदित हो गया था कि असल कारण उस के देशवासियों की कायरता का यह है कि वे लोग कोई काम प्रारम्भ करके उसको दृढ़ता पूर्वक समाप्त नहीं कर सकते, तथा अपने वाक्य और कर्म को एक करके दिखाना नहीं जानते और दासत्व में पत्र द्वारा सामाजिक शिक्षा का उपदेश करना असम्भव होने के कारण उसने यह विचारा कि एक समुदाय ऐसे मनुष्यों का संयुक्त करना चाहिए जो हर एक अत्याचार को सहन कर अपने मानसिक भावों के प्रचार में प्रवृत्त रहे, अपने परिश्रम के निष्फल होने पर कदापि निराश न हों, निष्फलता को केवल सफलता का खम्भ जान उसी प्रकार चेष्टा करते रहें, अत्याचारों की निवृत्ति में सयत्न रहें

और प्रसन्नतापूर्वक अपने उद्देश्य में जान दे देने को कुछ बड़ी बात न समझें। ऐसे मनुष्य के लिये, जो औरों को इस की शिक्षा करता हो, एक वेर की निष्फलता अथवा साथियों का छल कुछ भी नहीं कर सकता। यद्यपि इटली में कुछ काल के लिये ये सब काम काज बन्द हो गए थे और शिक्षा प्रचार भी बन्द था, पर मेजिनो हाथ पर हाथ रख के कभी बैठने वाला न था। उसने स्वीज़रलैण्ड के उन लोगों को, जो देश से निकाले हुए थे, एक सम्मत करने का सकल्प किया। मन, वचन, कर्म से उसकी सदा यही चेष्टा रहती थी कि सारे योरप की मनुष्यजाति एक-सम्मत हो जाय और कोई एक सबल जाति किसी दूसरी जाति की अबलता से कदापि लाभ न उठावे, और हर एक मनुष्य जाति का जातीय अधिकार संरक्षित रक्खा जाय और यदि किसी जाति की स्वतंत्रता शंका में पड जाय, तो दूसरी जातियां तत्काल उसकी सहायता करें। उसने एक ऐसी सोसाइटी स्थापित करने का विचार किया जिसमें प्रत्येक मनुष्य जाति के लोग सम्मिलित हो सकें, और जो एक प्रकार की सर्व जातीय सभा हो।. मेज़िनी ने एक स्थान पर लिखा है कि "यदि रिपबलिकन एकता से यह अभिप्राय है कि मनुष्य मात्र भाई हैं, और सबको परस्पर प्रेम होना चाहिए और उन कारणों को दूर कर देना चाहिए जो परस्पर द्वेष विरोध फैलाते हैं, तो हमलोग इस सिद्धान्त के पृष्टपोषक तथा सहायक हैं"। परन्तु प्रश्न तो यह है कि जो राज्य परम्परागत चला आता है उस राज्य को वहां के लोग कैसे पराजित कर सकते हैं। मनोकामना के पूरा होने के लिये एक सम्मत तथा एकता आवश्यक है। और जबलों सारी मनुष्य जाति की लाभ वा हानि की प्रणाली एक न हो जाय, तबलों
... सम्मति का होना अत्यन्त

कठिन है। यदि एक प्रबन्ध से एक मनुष्य को लाभ होता है और उसी प्रबन्ध से दूसरे को हानि, तो अवश्य यह अन्तिम कथित मनुष्य यथासम्भव उस प्रबन्ध के रोकने या उसके संशोधन में प्रयत्न करेगा। और जब एक मनुष्य एक प्रबन्ध के अनुकूल है, तथा एक दूसरा मनुष्य उसीके प्रतिकूल, तो इस प्रबन्ध का अन्त कदापि भला नहीं हो सकता। तो इस कारण यह अभीष्ट हुआ कि हर एक मनुष्यजाति अपनी जातीय मनोकामना के सिद्धार्थ उद्योग करे। विना इस मत के अनुसार चले हुए मनुष्य मात्र का भला नहीं हो सकता। जिस प्रकार घड़ी विना लिवर के नही चल सकती, उसी प्रकार मनुष्य मात्र की भलाई का काम भी किसी और रीति से नही चल सकता। दृष्टांत के लिये यदि मनुष्य समाज को घड़ी तथा जातीयता के विचार को उसका लिवर मानलें, तो वडी सरोतर तुलना होती है। यह बात प्रत्यक्ष है कि जब तक सब पुरज़े यथाक्रम न हों, तब तक कोई कल ठीक रीति पर नहीं चल सकती, और जबलों प्रत्येक पुरजे को उसके काम में स्वतंत्रता न दी जाय, पुरज़े दुरुस्त नहीं रह सकते। इसी प्रकार मनुष्य-समाज संशोधकों को उचित है कि अपनी जन्मभूमि को स्वतंत्र करने में उद्यत रहें। परस्पर मित्रता उन्हीं जातियों में रह सकती है जो स्वतत्र तथा स्वाधीन है, जिन्हें अपने काम की जवाबदेही किसी दूसरे को नहीं देनी है। स्वाधीन और पराधीन जातियों का एक सम्मति अथवा मित्र रहना एक व्यर्थ भ्रम है।

मेज़िनी को पूर्ण विश्वास था कि अवश्य एक समय ऐसा आवेगा जब कि योरप की समस्त जातियां स्वतंत्र होकर मित्रता पूर्वक एक दूसरे की सहायता करती रहेंगी और संसार में सभ्यता तथा शिक्षा का प्रचार करेंगी। एक की अबलता

से दूसरी लाभ उठाने का उद्योग कभी नहीं करेगी, वरन् सब के लाभ के हेतु सबकी उन्नति आवश्यकीय समझी जावेगी। इस मत के प्रचार के लिये मेज़िनी ने एक और सोसाइटी स्थापित की जिसका नाम उसने 'यंग योरप' रक्खा। इस सोसाइटी में सब ही ठौर के बन्दी तथा देश से निकाले लोग संयुक्त थे। इसके सिद्धान्त भी ये ही थे जो अभी लिखे जा चुके हैं। कुछ हो, पर मेज़िनी वेचारे को सुख भोगना बदा न था। सारे योरप की राजधानियां एक ओर हो उसके पकड़ने के लिये स्वीज़रलैंड गवर्न्मेंएट पर दवाव डालने लगीं। इसमें विशेषता से फ्रांस और इटली की ओर से दवाव दिया जाता था। पर शहर कान्टन के लोग मेज़िनी के सपक्ष थे, इस कारण विना दोषित ठहराए उसे नहीं पकड़ सकते थे। इस-लिये उस पर यह दोष लगाया गया कि वह फ्रांस तथा इटली के वादशाहों के मार डालने के यत्न में है। फ्रांस और इटली के दूतों ने यह मिथ्या कलंक सच ठहराने के अभिप्राय से एक मिथ्या कहानी भी गढ़ ली। पर कई इटली से निकाले हुए लोगों ने इन गुप्तचरों को पकड़ कर उनके पत्रों को छीन लिया और सारे भेद को प्रगट कर दिया। पर तौ भी स्वीज़रलैन्ड की मुख्य राज-सभा ने मेज़िनी को जीवन पर्य्यन्त देश से निकाल देने की आज्ञा दे दी। मेज़िनी इससे तनिक भी न घवड़ाया यद्यपि उसकी खोज में चारो ओर सर्कारी भेदिए घूम रहे थे, पर तिस पर भी वह स्वीज़रलैंड में ही रहा, और वह कदापि स्वीज़रलैन्ड से न जाता, यदि उसके दो परम मित्र उसे इस बात पर आग्रह न करते। उसने सं० १८३६ ई० में इङ्गलैन्ड जाने का विचार किया। इसके अन्तिम भाग में उसका चित्त बड़ा व्याकुल रहता और उसे नित्य यही सोच बना रहता कि जो काम वह कर रहा है वह सत्य मार्ग पर नहीं है। उसे

अपने परिश्रम में सफल होने का संशय होने लगा।

मेज़िनी इस मानसिक व्याकुलता का यों वर्णन करता है- "यदि मैं सौ वर्ष शेष जीवित रहूं तौभी इस समय को कदापि विस्मरण नहीं कर सकता, और न उस व्यवहारिक व्यग्रता को ही विसार सकता हूं जो मुझे भुगतनी पड़ी थी, और न उस भ्रमण के भंवर को भूल सकता हूं जिससे मेरी आत्मा गिरते गिरते बची। मैंने विचारा था कि मैं कदापि इस विषय को जिव्हा पर न लाऊंगा, परन्तु जो मनुष्य मेरे पीछे आवेंगे, और जिन्हें मेरेही सरीखे देशोन्नति का उनमाद रहेगा, उनको मेरा यह लेख अवश्य धीरज देगा, तथा मेरा उदाहरण उनके उत्साह को बढ़ावेगा और लाभदायक तथा रुचिकर होगा। इसलिये मैं इस व्यवस्था को अवश्य सविस्तार वर्णन करुंगा। मेरी यह मानसिक व्यग्रता केवल सम्भावना तथा भ्रम पर निर्भर थी, और मेरी अनुमति में जो मनुष्य अपने जीवन को किसी महान कार्य के निमित्त समर्पण करते हैं, उन्हें यह मानसिक व्यग्रता अवश्यही भुगतनी पड़ती है। मेरा हृदय प्रेम से सदा परिपूर्ण रहा है और सदा सुख की आशा करता आया हूं, और यदि अपने लिये नहीं तो किसी दूसरे ही के लिये किसी न किसी प्रकार की आशा करता रहा हूं। परन्तु थोड़े दिनों से सांसारिक दुःख अथवा काल की गति से ऐसा दुखित हुआ हूं कि वृद्ध अवस्था के समान शिथिलता मुझमें आगई है। जैसे कि किसी वृद्ध मनुष्य को एक बड़े जङ्गल में अकेला छोड़ देने से उसे उसकी अयोग्यता चारो ओर से एक भयङ्कर रूप में देख पड़ती है, उसी प्रकार मेरे नेत्रों के समाने भी वैसा ही समा बंध गया था। इसका कारण यही नहीं था कि मेरी जातीय मनोकामनाओं की सफलता थोड़े काल से असम्भव देख पड़ने लगी

हो, वा मेरी पार्टी वाले छितर वितर हो गए हों, वा अन्याय से बचने के लिए मुझको स्वीजरलैन्ड से भी भागना पड़ा हो। केवल यही कारण नहीं था कि जो कार्य्य मैंने स्वीजरलैन्ड में प्रारम्भ किया था, वह सब अकारथ गया और जो कुछ धन मेरे पास था, वह सब उठ गया; वरञ्च मुख्य कारण यह था कि वह प्रेम अथवा परस्पर विश्वास जाता रहा जिसके सहारे मैं अबलों अपने काम में दत्तचित्त लगा रहता था। मुझको चारो ओर भ्रम ही भ्रम देख पड़ने लगा। उन मित्रों में भी मुझे विश्वास न रहा जिन्होंने मेरी शुभचिन्तना की शुद्धान्तःकरण से प्रतिज्ञा की थी, और यह प्रण किया था कि कठिन से कठिन काम में वह मेरी सहायता करेंगे और मेरा साथ देंगे। मेरे बाहरी भाव से मेरे परम मित्रों के हृदय में शंका उत्पन्न होने लगी। तब भी मुझे इस बात के जानने की इच्छा न हुई कि लोग मेरे विषय में क्या अनुमान करते हैं। परन्तु यह देख कर कि वे दो एक मनुष्य, जिनसे मैं विशेष प्रीति रखता, मेरी प्रतिज्ञा की पवित्रता में शंका करने लगे हैं, मुझे अत्यन्त दुःख हुआ। इन बातों का मुझे उस समय ज्ञान हुआ जब कि लोग मुझपर चारो ओर से आक्रमण कर रहे थे। इससे मैं उस समय अभिज्ञ हुआ जब कि मुझे उन मित्रों से धीरज पाने की आवश्यकता थी जो कि मेरे सब अकारणिक अभिप्रायों को जानते थे, और जो दुख सुख में मेरे सहकारी रह चुके थे। ठीक अवसर पर मेरे परम मित्रों ने मुझे धोखा दिया और सबसे मुझे त्याग दिया। इस संसार में मेरी माता के अतिरिक्त और कोई मेरा साथी नहीं देख पड़ता था। मेरे चित्त में यह शंका उत्पन्न हुई कि कदाचित् मैं ही मिथ्या भ्रम में पड़ा होऊं और सारा संसार सत्य मार्ग पर होवे। मुझे अपने मानसिक विचार भ्रम से प्रतीत होने लगे

और जान पड़ने लगा कि उनमें सत्य लेशमात्र को नहीं है, और मुझे अपने सब कार्य स्वार्थ लाभ वश प्रतीत होने लगे और यह जान पड़ने लगा कि मैं जीत के लिए इस संसार में यों भटक रहा हूं। कदाचित् मैंने स्वार्थ साधन के हेतु अपने मनोविचार को एक उच्चतम भाव देकर अपने चित्तको उन मनोकामनाओं से फेर लिया हो जो सहज ही में सिद्ध हो सकती थीं। जिस दिन मेरे हृदय में ये शंकाएं उत्पन्न हुईं, उस दिन मैं बड़ा उदास था और मुझे जान पड़ता था कि मैं किसी ऐसे दोष का भागी हूं जिसका कोई मार्जन नहीं। जो मनुष्य कि स्किन्द्रिया तथा चेतवरी की रणभूमि में गोलियों से मारे गये थे, उनका भयङ्कर दृश्य मेरे नेत्रों के आगे घूमने लगा और मुझे प्रतीत होने लगा कि इस सब प्राण-वध की हत्या मेरे सिर है। मेरे ही कारण इतने प्राण नष्ट हुए। यदि मैं इसी प्रकार इटली के युवकों के हृदय में स्वतंत्र सम्मति का अंकुर उत्पन्न करता रहा तो ऐसे ही कितने प्राण नष्ट होंगे। कदाचित् मेरा यह भ्रम ही भ्रम हो और परमेश्वर की यह इच्छा हो कि इटली अब अपने से अधोगत जातियों के आधीन होकर रहे, न संसार में प्रशंसा को प्राप्त हो और न पृथ्वी तलपर किसी कार्य के योग्य हो। मुझमें यह शक्ति कदाचित् नहीं आ सकती कि मैं भविष्यत के विषय में पूर्व से एक अनुमति ठहरा सकूं। और अपनी उस आगम-वाणी के अनुकूल लाखों जीव को मरने मारने पर तत्पर करूं। इन मिथ्या भ्रम का जो बुरा प्रभाव मेरी वृत्ति पर पड़ा, उसका वर्णन करना मेर सामर्थ से,बाहर है। केवल इतना कह देना अभीष्ट समझता हूं कि क्लेश से मैं उन्मत्त सरीखा हो गया। प्राय रात्रि को सोया सोया चौंक उठता था और चित्त विभ्रम से यवनिका की ओर दौड़ा हुआ जाता था।

कभी यह भावना मेरे चित्त में होती कि जेकब-रिफने मुझको पुकार रहा है। कभी स्वतः बिना प्रयोजन उठ खड़ा होता और कांपता कांपता दूसरे कमरे में चला जाता। कभी यह भावना उठती कि अमुक मित्र मेरे लिये बैठा है, उससे जाकर भेंट कर आऊं, यद्यपि मैं जानता था कि वह कारागार में है अथवा सैकड़ों मील की दूरी पर है। छोटी छोटी बातों पर मेरे आंसु टपक पड़ते थे और मैं रोने लग जाता था। सांसारिक हर एक वस्तु से मुझे एक प्रकार का विराग उत्पन्न हो गया था और सुन्दर सुन्दर वस्तुएं मुझे भयङ्कर देख पड़ती थीं। प्राकृतिक सौन्दर्य, जो मेरी दृष्टि तथा मेरे चित्त को अत्यन्त प्रिय तथा रुचिकर था, अब भय दिलाता जान पड़ता था। मेरे चित्त में अब यह भावना उठा करती थी कि जो मनुष्य मेरी ओर देखते हैं, वे मानो मुझे लज्जित करते हैं और मुझे करुणा और दया-दृष्टि से देखते है। निस्सन्देह यदि थोड़े दिनो ऐसी दशा और रहती तो मैं अवश्य उन्मत्त हो जाता, अथवा स्वय प्राणघात कर लेता। एक वेर मैंने सुना कि मेरा एक मित्र, जो मेरे घर के समीप ही रहता था, अपने पुत्र से मरे विषय मैं यों वार्तालाप कर रहा था। उस मनुष्य की बातों से एक प्रकार की घृणा प्रगट होती थी। पुत्र मेरी आपत्ति पर दया करके अपने पिता से यों सविनय बोला कि वह मुझसे आकर भेट करे और इस विपद् काल में मेरे साथ रहे। इस पर उसके पिता ने उत्तर दिया कि ' रहने दो वह अकेला ही प्रसन्न है। वह तो सदा राजविद्रोह के ही सोच में पड़ा रहता है'। सत्य है, किसीकी चित्तवृत्ति का हाल जानना अत्यन्त कठिन है। विशेषतः ऐसी अवस्था में जब कि हमको उससे कुछ अधिक परिचय न हो, तब तो केवल असम्भव है। एक दिन जब मैं प्रातः काल उठा

तो मैंने अपना चित्त बहुत शान्त पाया। मुझे उस समय ऐसा प्रतीत होता था मानो मैं किसी बड़े दुःख या क्लेश की अवस्था से उठा हूं। यह काल सदा मेरे लिये व्याकुलता का होता, इस कारण कि रात्रि की निद्रा के उपरान्त प्रातःकाल उठते ही मैं अवश्य चिन्ताग्रसित हो जाता था। इधर थोड़े दिनों से तो मैं एक ऐसा चिन्ताग्रसित रहता कि प्रातःकाल ही से दुःख क्लेश एकत्रित हो मुझे घेर लेते थे। परन्तु उस दिन मेरे चित्त का यह भाव न था। वरन् ऐसा जान पड़ता था मानो स्वयं सृष्टि ही मुझे ढाढ़स दे रही हैं और प्रेमवश हो मुझे देखके मुसकिरा रही है। इसी सूर्य के समान प्रकाश से मेरे शरीर में पुनः संजीवनी-शक्ति का संचार होने लगा। पहिला भाव जो मेरे चित्त में उत्पन्न हुआ वह यह था कि मेरी ये सब आपत्तियों का मूल मेरा स्वार्थसाधन है, और मैं जीवन का अर्थ (उद्देश्य) ही अशुद्ध समझ बैठा हूं। अब मेरी अवस्था इस योग्य हो गई थी कि मैं एकाग्रचित्त हो अपनी तथा अपने चारो ओर की व्यवस्था की परीक्षा करूं। यथार्थ सारी फ़िलासोफ़ी का मूल इसी प्रश्न पर है कि जीवन का वास्तविक उद्देश्य क्या है। यह बात कोई माने चाहे न माने, परन्तु सूक्ष्म दृष्टि से यदि देखा जाय तो यही सारी फ़िलासोफ़ी का मूल है। भारतवर्ष के प्राचीन धार्मिक पुरुषों ने जीवन का मूल चित्त-निवृत्ति कहा है, और इसी कारण यहाँ के मनुष्यों में आलस्य तथा परमेश्वर में लीन कर देने वाली प्रकृति आगई है। ईसाई मत वालों ने जीवन को कुफारा नियत किया है और इसीसे सांसारिक यावत् दुःख क्लेशों को धीरज वरन् प्रसन्नता पूर्वक सहने का धर्मानुसार नियम ठहराया है, और उनसे बचने में सयत्न होना पाप कहा है। इस मत वाले इस संसार को दुःख का घर कहते हैं। इनके मतानुसार संसार की यावत्

वस्तुओं को घृणा की दृष्टि से देखना ही मानो मुक्ति दिला सकता है। अट्ठारहवीं शताब्दी के मेटीरियलिजम ने मनुष्य की धार्मिक अवस्था को दो हज़ार वर्ष व्यतीत अवस्था से पीछे गिरा दिया है, जिससे मनुष्य जाति जीवन के सुख भोगने का समय विचारने लगी है, जैसा कि किसी काल में मूर्तिपूजक मनुष्य समझते थे। और वर्तमान समय में मनुष्य जाति के स्वार्थी होने का भी यही कारण है, जिससे ऐसा घृणित समा बन्ध गया है, कि धन प्राप्ति की ओर में मनुष्य जातियां मरने मारने पर उपस्थित हो रही हैं, जिसका अन्त फल यह होता है कि ज्योंही उनकी इच्छा पूरी हुई कि वे अपने साथियों को मझधार में तज अलग हो जाती हैं। उनके चित्त में कभी कभी उदारता तथा स्वतंत्रता के भाव उत्पन्न होते रहते हैं, परन्तु वे भाव ऐसे मन्द होते हैं कि तनिक दुःख पड़ने पर चित्त से उड जाते हैं, और जैसे धूआं वायु में मिल लुप्त हो जाता है, वैसा ही उनका भी फिर पता नहीं रहता। इन्हीं कारणों से मनुष्य जाति सांसारिक लोभ के आगे सिद्धान्तका कुछ ध्यान नहीं रखती, जिसके बहुत बुरे बुरे फल उत्पन्न हुए हैं और जो मनुष्य समाज में अबलों फैल रहे हैं और जिनकी दिनोदिन वृद्धि ही हो रही है। मुझे यह भावना उत्पन्न हुई है कि यद्यपि मुझको ऐसे अभिमान से बहुत घृणा है, परन्तु इसका जो प्रभाव वर्तमान कालपर पड़ा है. उससे मैं भी वर्जित नहीं, क्योंकि प्रथमावस्था में मुझे इन्हीं बातों की शिक्षा मिली थी, जिसको मैंने अभी तक हृदय-पटलिका पर खचित रक्खा है। मैं अन्तःकरणसे उस गवर्न्मेंन्ट वा उस मनुष्य जाति का शत्रु रहा हूं, जो सर्वसाधारण को दासभाव में रहने के अभिप्राय से यह प्रचार करे कि सर्वसाधारण को सुख भोगने का अधिकार नहीं है। यद्यपि मैंने औरों में से इस बुरे सिद्धान्त

के निकालने की पूरी चेष्टा की थी, पर अपने हृदय से उसे अवलों नहीं निकाल सका था। जीवन के ये उलटे उद्देश्य समझ लेने से मेरे सब अरमान बुझ गए थे। पर इस मनोविचार ने मोह के जाल में मुझे ऐसा फँसाया था, कि इससे बाहर पैर धरना मेरे सामर्थ से बाहर था। निस्सन्देह मोह एक परमेश्वरी पदार्थ है और ऐसे स्वर्गीय पदार्थ को, जो कि जीवन को सुखमय बनाता है, बडे धन्यवाद पूर्वक ग्रहण करना उचित है। परन्तु हम लोगों का यह विचारना केवल भूल है कि जिस मनुष्य की हम सेवा करें, उसे इसके प्रतिकार में हमसे स्नेह तथा हमारी सहायता करनी चाहिए। प्रेम का आशय यह है कि जिसके प्रतिकार में किसी सांसारिक वस्तु की लालसा न की जाय। मैंने अपने आप ही यह मिथ्या अर्थ समझ उसके सुखों को यह नीच दरजा दे दिया था। इसी कारण जब जब ये सुख प्राप्त न हुए तो मैं निराश हो बैठा, मानो मैंने यह स्वयं स्वीकृत किया कि जीवन उद्देश्य का सुख वा दुःख पड़ने पर परिवर्तन हो सकता है। आपत्तियों को विचार मैंने अपना जीवन मार्ग बदल दिया, जिसका परिणाम यह हुआ कि आत्मा के मृत्यु-रहित होने में मुझे पूरा विश्वास न रहा। मुझ में उस दृढ़ विश्वास की कमी पाई गई जिसके द्वारा मनुष्य जीवन में एक आवागमन नियत किया गया है, जिसमें एक योनी की कठिनाइयों से निकल कर मनुष्य दूसरी योनी की आपत्तियों में प्रविष्ट होता है। मनुष्य आत्मा जीवन के आवागमन में जकड़ी हुई है। वह प्रत्येक जीवन में उन मानसिक भावों में उन्नति करती रहती है जो इस संसार में एक बीज के समान है। मुझे ज्ञान हुआ कि मेरे किये हुए कार्य उस मनुष्य के समान हैं जो यह विचारता हुआ सूर्य के अस्तित्व में शङ्का करने लगता है, कि वह अपने स्वरूप को उसकी किरणों से प्रकाशित

न कर सका। अतएव मैंने यह परिणाम निकाला कि मैंने अपने दिन कायरता से काटे, और विशेपता यह कि विना जाने बूझे मैं उस स्वार्थ-साधन का शिकार बना रहा जिससे मैंने स्वयं अपने को वर्जित समझा था। इसका कारण यह था कि मैंने अपने जानते इस स्वार्थ साधन को उच्चतम तथा शुद्ध श्रेणी का समझ लिया था। मनुष्य जीवन एक मिशन है। अथवा दूसरे शब्द में यह कहना चाहिए कि एक व्रत है। इसके अतिरिक्त कोई दूसरा अर्थ समझना सर्वथा भूल है। धर्म, सायन्स और फ़िलासोफ़ी, दूसरे विपयों में चाहे कितना ही परस्पर प्रतिकूल हों. परन्तु इस बात में सब सहमत हो जाते है कि मनुष्य जीवन का कुछ न कुछ उद्देश्य अवश्य होता है। यह न मानने से मनुष्य जीवन में उन्नति वा अवनित एक जैसी हो जाती है, क्योंकि जब मनुष्य जीवन का कोई उद्देश्य ही नहीं तो उन्नति वा अवनति करना किस के विषय में कहा जा सकता है। मेरी अनुमति में मनुष्य जीवन का केवल एक यही उद्देश्य हो सकताहै कि मनुष्य मात्र की सब इन्द्रियों को इस प्रकार शिक्षित करे कि वे अपने दूसरे भाई की सर्वदा सहायता किया करें और सब इन्द्रियां सहमत हो जीवन का नियम बनावें। जब हम यह कहते हैं कि मनुष्य जीवन का यही एक मात्र उद्देश्य है, तो हमें यह भी कह देना उचित है कि मनुष्य के लिये एक और उद्देश्य है। चाहे वह किसी समय वा किसी अवकाश में उत्पन्न क्यों न हो उनका एक और उद्देश्य भी आवश्यकीय होता है। इसको उद्देश्य नम्बर दो कहना चाहिए। पर यह उद्देश्य पहिले के आधीन तथा उसीका समर्थन करता है। बहुधा मनुष्य इस अवस्था में उत्पन्न होते हैं और उनका कर्तव्य वा उद्देश्य इसी में होता है कि अपने समाज का संशोधन करें। बहुतेरे मनुष्यों को यह अवकाश दिया जाता है कि

वे अपनी जाति की बिखरी हुई कलों को एकत्र करके जातीयता का स्नेह आपस में उत्पन्न कर दें, उनकी सामाजिक व्यव· स्था को शुद्ध मार्ग पर लगा दें, अथवा किसी प्रकार का राजनैतिक वा धार्मिक उत्साह उत्पादन कर दें,। इटली का एक विख्यात कवि डैन्टी लिखता है कि 'जीवन एक समुद्र के समान है जिस पर मनुष्य उन जहाजों के समान चल रहे हैं जिनको किसी विशेप स्थान वा बन्दरगाह में जाना है'। यदि मनुष्यमात्र अवलों अपनी बाल्यावस्था में हैं, और ये निर्णय नहीं कर सकते कि वह विशेप उद्देश्य क्या है जिसको उन्हें कुछ न कुछ अवश्य प्राप्त करना है, उनके इस बात का समर्थन करता है कि उनको अपना जीवन एक 'जीवन' बनाना, तथा अपने जीवनकाल में स्वयं पवित्र बनकर दूसरों को पवित्र बनाने की उनको चेष्टा करनी चाहिए। हमारा जीवन पौधों के समान नहीं होना चाहिए वरन् "जीवित जाग्रत" होना चाहिए जिससे हम मनुष्य समाज को पवित्र बनाने में भाग लें। यदि मनुष्य जीवन एक मिशन वा एक व्रत है, जिसका पूरा करना हमारे लिये आवश्यक है, तो 'कर्तव्य' उसका एक उच्चतम श्रेणी का नियम है। व्रत वा कर्तव्य के पूरा करने से हमको भविष्यत् उन्नति के मार्ग का ज्ञान होता है। इस देहान्त के उपरान्त जो दूसरा देह हम धारण करेंगे, वह उसी श्रेणी का होगा जिस श्रेणी तक हमने पूर्व जन्म में जीवन के व्रत को निभाने, तथा निज कर्तव्य के पूरा करने में परिश्रम किया है। हमारा भविष्यत् जीवन ठीक हमारे वर्तमान परिश्रमों का प्रतिफल होता है। मनुष्य की आत्मा अमर है, पर आत्मा किस भांति उन्नति करेगी, तथा कब कब उन्नति करेगी यह सब हमारे अपने हस्तगत हैं। सारांश यह कि आत्मीय उन्नति मनुष्य स्वयं मन, वचन, कर्म से कर सकता है। हममें से हर एक

का कर्तव्य है कि हम अपनी आत्मा को एक मन्दिर वा एक देवस्थान के समान पवित्र तथा स्वच्छ रक्खें और इस देव-मन्दिर में स्वार्थ साधन को घुसने न दें, और यदि यह घुस गया हो तो उसे निकाल दें। इस मन्दिर को पवित्र तथा स्वच्छ बनाकर जीवन व्रत के सोचने में प्रवृत्त हों और सदा यही सोचते रहें कि इसी मार्ग की सफलता पर हमारे धार्मिक उद्धार की सम्भावना हो सकती है और फिर जिस समाज में परमेश्वर ने हमको उत्पन्न किया है उसकी आवश्यकताओं के पूरा करने में हम यथाशक्ति सयत्न रहें। उस समाज को किस किस वस्तु की आवश्यकता है और किस उपाय से वे प्राप्त हो सकती हैं, इन प्रश्नों को यों ही सोच विचार करने अथवा केवल वेदान्तिक रीति पर आत्मीय प्रसन्नता प्राप्त करने से अभिप्राय सिद्ध नहीं हो सकता। 'उसी मनुष्य को इन प्रश्नों का उत्तर आत्मा की ओर से मिल सकता है जो धार्मिक कर्तव्य के विचार को सामने रख कर अत्यन्त सूक्ष्मता से अपने कान्शेन्स से सविनय निवेदन करे, अपने हृदय के शब्द को एकाग्रचित्त हो सुने और फिर अपनी सब शक्ति को उसी काम में लगावे। जो आत्मा इस रीति पर प्रश्न के सिद्ध करने में परिश्रम करेगी उसको अवश्य अन्दर से उत्तर मिलेगा। जब एक बेर यह उत्तर मिल जावे तो फिर संसार के किसी विघ्न वा किसी भय से तुम्हारे पद नहीं रुकने चाहिएं। सारी शक्ति, सारा बल, उसके अनुसार काम करने में लगना चाहिए। चाहे कोई प्रीति करे अथवा विरोध करे, चाहे दूसरे तुम्हारे साथ हों, अथवा न हों तुम्हें अपने काम पर ध्यान देना चाहिए। जब एक बेर मार्ग मालूम हो गया हो तो हमको उचित है कि उसको न छोड़ें। इससे विशेष और क्या कायरता होगी कि ऐसे परिश्रम से मार्गकी सुध लगावें और तब दुःख

तथा कठिनाई से भय खाकर निरुपित स्थान तक पहुंचने से वर्जित रहें। जो मनुष्य ऐसा करे उसे समझना चाहिए कि वह अपनी भविष्यत् उन्नति की कुछ परवाह नहीं करता है। इस प्रकार के मानसिक भावों ने मुझे विश्वास दिला दिया कि सैवोना के वन्दीगृह में जो कुछ मैं ने अपने जीवन का उद्देश्य स्थिर किया था, वही मेरे जीवन का यथार्थ काम है। जबलों मेरे शरीर में प्राण हैं, मुझे उसीकी प्राप्ति के लिये परिश्रम करना चाहिए। उन भावों को सविस्तर वर्णन करना वा उस व्याकुलता का ज़िकर करना, जो इन भावों के द्वारा मेरे हृदय में उत्पन्न होती रहती थीं, इस स्थान पर व्यर्थ होगा। सारांश यह कि मैंने उसी समय बैठ कर समस्त दुःखों को टांक लिया जो मुझे उस समय पर्य्यन्त सहन करने पड़े थे, और साथ ही उन भावों का भी उल्लेख कर लिया जिन से मुझे शान्ति तथा धीरज मिला था। रोम को जब मैं गया तो ये पत्र मेरे साथ थे। परन्तु खेद का विषय है कि लौटती समय फ्रांस में गुम हो गये और अब पुनः उन भावों का लिखना निरा असम्भव है। सारांश यह कि इस प्रकार बिना किसी दूसरे की सहायता के स्वतः मुझ में चैतन्यता आगई और मुझे धार्मिक विचार से शान्ति हो गई। मैंने सब से पहिले परमात्मा का ध्यान किया, उसके उपरान्त आत्मा की उन्नति का विचार किया। इसीसे मुझे जीवन का सच्चा मार्ग प्राप्त हुआ और मेरे हृदय में यह विश्वास उत्पन्न हुआ कि जीवन एक व्रत है, और उस व्रत के पूरा करने का उपाय यही है कि मनुष्य अपने कर्तव्य को पूरा करना सबसे उच्चतम तथा अपना परम कर्तव्य कर्म समझे, यहां तक कि मैंने यह उदाहरण निकाला और उसी के अनुसार यह प्रण किया कि मैं कदापि भ्रम शङ्कादि को अपने निकट न आने दूंगा और सदा अपने काम

में लगा रहूंगा। इस भांति दु:ख तथा क्लेश से मुझे शान्ति हुई और मैंने सीखा कि दु:ख आपत्तियां इस तरह से प्रसन्नता पूर्वक सहनी चाहिए थीं और अपनी आत्मा को शान्ति तथा एकाग्र रखना चाहिए था। उस समय से स्वार्थपरता को मैंने अपने हृदय से निकाल दिया, अथवा दूसरे शब्दों में मैंने मन की उन सब कामनाओं का परित्याग कर दिया, जिनको हिन्दू शास्त्र राग तथा मोह के नामसे स्मरण करते हैं। इससे मेरा यह अभिप्राय नहीं कि मैंने प्रेम की शक्ति को अपने हृदय से निकाल दिया क्योंकि ऐसा करना असम्भव था और परमेश्वर मेरा साक्षी है कि मुझमें इस समय भी इस वृद्ध अवस्था में प्रेम की वही शक्ति बनी है जो प्रथमावस्था में थी। मेरा तात्पर्य यह है कि मैंने अपने हृदय से अपनी सब इच्छाओं को निकाल दिया था और मोहवश जो आवश्यकता तथा सुख मनुष्य को आवश्यक होता है, उसे भी तज दिया था। सारांश यह कि मैंने 'आत्मीयता' को तथा 'अपने आप' को ऐसा दबा दिया कि फिर उसका कोई चिन्ह भी देख नहीं पडता था। मुझे अपने जीवन में सुख भोगना कदापि प्राप्त नहीं हुआ था और न उस समय भी मैं सुखी था, अथवा मुझे किसी भविष्यत् सुख की आशा हो सो भी नहीं थी। ईश्वर परमात्मा को धन्यवाद देना मुझे आवश्यक है, जिसने इस वृद्धावस्था में ऐसा सामान एकत्र कर दिया था जिससे मुझे धीरज तथा सन्तोष मिलता रहता था। पर यदि धीरज मुझे न मिलता तौ भी मैं वही रहता जो अब हूं। जो कुछ होता, पर मैं अपने काम में वैसा ही दृढ़ रहता। परमात्मा मेरे सिर पर है और विश्वास तथा भविष्यत् जीवन के स्वच्छ तारे मेरी आत्मा में चमक रहे हैं। चाहे उनका प्रकाश किसी दूसरे पर न पड़े, परन्तु मेरे लिये उनका प्रकाश यथेष्ट है।

जोजेफ़ मेज़िनी का यह लेख उस समय की सामाजिक व्यवस्था का फ़ोटो खींच देता है। जब वह इङ्गलैंड में पहुंचा तो ऐसी दीन अवस्था में था कि भोजन तक का ठिकाना भी न था। इस दुःख के अतिरिक्त उसको शारीरिक दुःख भी इस समय भोगना पड़ता था। परन्तु वह इन दुःखों से ऐसा बेपरवाह था कि उसने इनका स्मरण भी अपने इन लेखों में नहीं किया है, और जो थोड़ा वर्णन किया भी है वह केवल इस अभिप्राय से कि जिसमें दूसरे मनुष्य इससे धीरज तथा सन्तोष पावें। यद्यपि उसने अपने जीवनवृत्तान्त में यह कहीं नहीं लिखा कि इस दीन अवस्था का क्या कारण था, पर इस कमी को पूरा करना हम अपने ऊपर उचित समझते हैं, क्योंकि इससे मेज़िनी की सज्जनता प्रगट होती है। मेज़िनी जब इङ्गलैण्ड में पहुंचा तो उसके साथ उसके तीन मित्र और थे, जिनको देश निकाले की आज्ञा मिल चुकी थी। इन तीनों से उसे अत्यन्त प्रीति थी, तथा उनको वह अपना विश्वासपात्र समझता था। मेज़िनी की माता अपने पुत्र के निर्वाह के लिये कुछ व्यय भेज दिया करती थी, और मेज़िनी भी बड़े संयम से उसी पर निर्वाह करता था। परन्तु अपने इन तीनों मित्रों के आने से जो अङ्गरेजी देश तथा भाषा से बिलकुल अपरिचित थे, वह बड़े दुःख में पड़ गया। उसपर विशेषता यह हुई कि उक्त महाशयगण मेजिनी के आचार के बिलकुल उलटे थे। सदा बड़बड़ाते रहते और मेजिनी की सरलता तथा सज्जनता से अनुचित लाभ उठा कर सदा उसकी निन्दा किया करते। जरा से दुःख पर नाक में दम कर देते और सदा उसपर एहसान जताते। मेज़िनी की उदारचित्तता देखनी चाहिए कि वह जरा सी वस्तु के चार भाग कर आपस में बांट लिया करता। उसकी माता जेनोआ से उसके लिये वस्त्र

भेजा करती थी, पर जब उसे समाचार मिला कि उसका पुत्र विना अपने तीन मित्रों को दिए स्वयं नहीं लेता है, तो वह भी वहां से चार वस्त्र भेजने लगी। सच है माता हो तो ऐसी ही, और पुत्र भी हो तो ऐसाही हो। जब पहिले पहल मेज़िनी देश से निकाला गया तो उसके पिता ने उसको डरा कर कर्मचारियों की आधीनता स्वीकृत करने के अभिप्राय से उसकी जीविका वन्द कर दी। उसने यह सोचा कि ऐसा करने से मेज़िनी तंग होकर अवश्य क्षमा प्रार्थी होगा। यद्यपि उसकी माता उसके शुद्ध अभिप्रायों को जानती थी, पर अपने पति की अनुमति का विरोध नहीं कर सकती थी। इसलिये आप वडे संयम से कुछ रुपया बचा कर अपने पति की चोरी छठे महीने अपने पुत्र के पास उसे भेज दिया करती थी। इसको इस काम में अपनी एक सुशील बेटी से बहुत सहायता मिलती थी, जो कि स्वयं अपने प्यारे भाई के लिये हर एक प्रकार का दुःख सहती, तथा स्वयं दुःख उठा कर उसकी सहायता करती। ये दोनो सुशील स्त्रियां वर्षों तक अपने प्यारे पुत्र तथा भाई के लिये अत्यन्त दु ख उठाती रहीं। पर इन्होंने मेजिनी पर यह नहीं खुलने दिया कि किस दु.ख से मेज़िनी के लिये रुपया बचाया जाता है। मेज़िनीं को यह भी मालूम नहीं हुआ कि उसके पिता ने किस कठोरता से उसके साथ सलूक किया है, और वह सदा यही समझता रहा कि यह सहायता उसको अपने पिता तथा माता की ओर से मिलती है। मेज़िनी ने स्वयं एक ठौर अपनी गरीबी का वर्णन किया है, जिसका कुछ भाग हम लिखते हैं--

"जो रुपया मेरे माता पिता मुझे भेजते थे, उसको परोपकार तथा जातीय सेवा में व्यय करने से मेरी धन सम्बन्धी अवस्था एसी खराब हो गई थी कि प्रायः भिक्षा मांगने की

नौबत पहुंच जाती थी। सन् १८३७ से सन् १८३८ के जून तक यही हाल रहा। यदि मैं अपने माता पिता को यह हाल कहला भेजता तो कदाचित् वे मेरी सहायता करते। परन्तु उन लोगों को मेरे कारण पहिलेही इतना दुःख भोगना पड़ चुका था कि अब पुनः इस नवीन दुःख का समाचार भेजना अनुचित विचार मैं अपनी अवस्था उनसे छिपाए रहा और चुपचाप अपनी विपद् को सहता रहा। अब नौबत यहां तक पहुंच गई कि मैंने जो जो वस्तु अपने माता पिता तथा मित्र बन्धुओं से सहायतार्थ पाई थी, उसे गिरवीं रख दिया। तदोपरान्त छोटी छोटी वस्तु गिरवीं की। एक दिन शनिश्चर की संध्या को एक पुराना जूता और एक कोट बन्धक रखना पड़ा। इस दिन संध्या समय मैंने अपने आपको उन कङ्गाल तथा दरिद्र मनुष्यों की पंक्ती में खड़ा पाया जो कबाडी की दूकान पर अपने अपने कपडे गिरवीं रखने को खड़े थे। इसके पश्चात् मेरे कई देशवासियों ने मेरी जमानत करली और मैंने उन सोसाइटियों से रुपया उधार लेना आरम्भ किया जो मनुष्य का रक्त भी पीलेते हैं और चालीस पचास रुपये सूद लेकर भी सांस नहीं लेते, सूद न पाने पर लोगों के बदन से वस्त्र उतरवा लेते हैं, यहां तक कि अंग ढकने को एक चिथड़ा भी पास नहीं छोड़ते। इन सोसाइटियों के कार्य्यालय विशेषतः शराबखानों में ही होते हैं। शराबी शराब में चूर बेबस हो इनसे उधार लेने लग जाते हैं और उनके पंजे में फंस जाते हैं। मैं भी बहुत दिनों तक इनका शिकार बना रहा और शराबियों की पक्ती में खड़ा हो अपनी आवश्यकता का निवारण करता था। ये आपत्तियां स्वतः ऐसी अधिक थीं कि मैं उनके भार के नीचे दबकर मर जाता। उसपर विशेषता यह थी कि मैं अकेला था। न तो कोई मित्र था और न कोई सहा-

यक। परदेश में एक दरिद्र भित्तुक के समान वास करता था और फिर ऐसे देश में, जहां गरीब लोग एक प्रकार की शङ्का की दृष्टि से देखे जाते हैं, जहां दरिद्र मानो अविश्वसनीय और प्रायः अन्याय तथा अत्याचार के पात्र माने जाते हैं। मेरे लिये उचित नही कि मैं इन आपत्तियों का स्मरण करूं। पर उस लिये उनका उल्लेख करता हूं कि यदि भविष्यत में कोई भाई इसी प्रकार इन विपद आपत्तियों में जा फंसे, तो उसको मेरा यह लेख संतोषदायक हो। चित्त तो यह चाहता है कि योरप देश की माताओं से सविनय निवेदन करूं कि मेरी आपत्तियों को सन्मुख रख कर अपने मन में यह निश्चय कर लें कि योरप देश की वर्तमान अवस्था में कोई भी स्वयं अपना अधिकारी नहीं, और कोई भी नहीं कह सकता कि कल उसके साथ अथवा उनके साथ जो उसको अत्यन्त प्रिय है, क्या वीतेगी। इस अवस्था में माताओं को उचित है कि अपने प्यारे सन्तानों को लाड प्यार में न पाल, तथा सुख संभोगादि का अभ्यसित न कर, उनको उनकी प्रथमावस्था में ही दुःख कठिनाइयों का अभ्यासी करने में सयत्न रहें, कि जिसमें उनको अपने भविष्यत् जीवन में कष्ट न हो। ऐसा करने से वह यथार्थ प्रसन्नता तथा आत्मीय उन्नति के प्राप्त करने के उपयुक्त बनेंगे, और अपने जीवन का सामान स्वयं इकट्ठा कर लिया करेंगे। मैंने यह वात प्रायः देखी है कि इटली देश के धनवान व्यक्तियों के पुत्र, जिनको सृष्टि ने ऐश्वर्य भोगने के लिये उत्पन्न किया था और जो सुख संभोगादि के अभ्यसित थे, मेरे समान दरिद्रता के पंजे में आकर या तो वडे वडे पाप कर्म के कर्त्ता हुए हैं, या स्वयं प्राणघात कर अपनी जान पर खेल गए हैं और जीवन का यह दुःखान्त परिणाम कर दिखाया है। मैं साभिमान लिखता हुं कि मैंने

इन सब आपत्तियों को हंसते खेलते सहन किया है, क्योंकि मेरी माता ने प्रथमावस्था से ही मुझे सहनशीलता की ऐसी शिक्षा दी थी कि मैं बड़े बड़े कष्ट में भी धीरज को अपने हाथ से नहीं छोड़ता था।"

अहा! क्या शब्द हैं और कैसा कल्याणकर उपदेश है! भारतवासियों को विशेषतः इन शब्दों की ओर ध्यान देना उचित है जो कि अपने बच्चों को अंगरेजी फेशन का शिकार बना रहे हैं, जोकि अंगरेजी गुण को छोड उनके अवगुण को ग्रहण करते जाते हैं। ऐसी विपद में भी मेजिनी ने परोपकार को नहीं छोड़ा था। अपने देशनिकाले भाइयों की सहायतार्थ अंगरेजी पत्रों में लेख लिखा करता था। पर वह प्रायः ऐसे लेख लिखता जिनका कुछ न कुछ सम्बन्ध इटली से अवश्य होता, अथवा दूसरे विषयक लेखों में भी वह इटली सम्बन्धीय विषयों का स्मरण कर जाता। ऐसा करने से उसका अभिप्राय यह था कि जिसमें अंगरेज़ी सर्वसाधारण को इटली सम्बन्धी विषयों से पूरी अभिज्ञता हो जाय, और इस प्रकार कुछ कालोपरान्त उसने इटली के लिये अंगरेज़ी जाति में वह दया तथा करुणा उत्पन्न कर ली जिससे कुछ समयोपरान्त उसकी जाति को बहुत लाभ पहुंचा। पर इस काम में भी उसे बहुत सी कठिनाइयां उठानी पड़ीं। अब मेज़िनी का यश इतना फैल गया था कि योरप की राजधानियां उसके नाम से घबड़ाती थीं। अंगरेज़ी पत्र सम्पादक उसके लेख छापने में अरुचि प्रगट करते थे, विशेषतः ऐसे लेख वे कभी नहीं छापते जिनका उसके देश से कुछ सम्बन्ध होता, अथवा जिस लेख में उसके मानसिक भाव का प्रादुर्भाव होता। पर रोटी कमाने के लिये उसे ऐसे लेख लिखने पड़ते थे जिनमें वह अपने मानसिक भाव को वस्तुतः प्रगट नहीं करता था; परन्तु तिसपर

भी वह हर एक लेख में कोई न कोई इशारा इटली विषय का अवश्य कर देता, जिसका अन्त परिणाम यह हुआ कि वह निदान एक प्रान्त के अंगरेज़ी जाति की सहानुभूति प्राप्त करने में कृतकार्य हुआ। जब मेज़िनी प्रथम बेर इङ्गलेण्ड देश में आकर रहा तो कई दृढ़चित्त इटालियन युवकों ने उसकी सहायता से नेपल्स के अन्यायी राज्य पर आक्रमण करना चाहा। जब मेजिनी को इसका समाचार मिला तो उसने उनकी अनुमति का विरोध किया, और कहा कि ऐसा करना केवल उचित समय से पूर्व तथा मूर्खता होगी, और वृथा प्राण नष्ट होने के अतिरिक्त और कोई प्रयोजन नहीं निकल सकता।

इसी समय इङ्गलिश गवर्न्मेंएट की आज्ञा से मेजिनी की चिट्ठियां चोरी से खोली जाने लगीं। आस्ट्रियन तथा नेपल्स गवर्न्मेंन्ट की विनय पर अंगरेजी राजनीतिज्ञों ने वह अधम कार्रवाई जारी कर दी जो कि टेलीरेन्ड और फौची के कारनामें से भी बढ़ जाती है। मेज़िनी की सब चिट्ठियां चोरी चोरी खोल के देख ली जाती थीं, और उनकी नकल उतार के उक्त दोनो राजधानियों के पास भेज दी जाती थीं, जिसका अन्त फल यह हुआ कि वे सब युवाजन फांसी दे दिए गए जिन्होंने इटली की स्वतंत्रता के लिये युक्तियां सोची थीं, मानो अङ्गरेजी मंत्रीगण भी इन प्राणवध रूपो पाप के भागी हुए। मेज़िनी को भी इसका हाल मिल गया। उसने बड़े श्रम तथा एक और सभासद की सहायता से, जिनका नाम टोम्स डनकूम्ब था, इस विषय की सूचना हाउस आफ कामन्स को दी, जहां दोनों हाउस की सम्मत्यानुसार एक पार्ल्यामेन्टी कमेटी बैठाई गई। कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में यह स्पष्ट स्वीकार किया है कि सं० १८०६ से लेकर सं० १८४४ तक बराबर सब नीतिज्ञ महाशय इस अनुचित ढंग से इस विषय-

रहे। मेजिनी ने लिखा है कि "केवल हमी सबकी नहीं, वरन् बहुत से और मेम्बर पार्ल्यामेंएट की चिट्ठियां खोल कर देखी जाती थीं और फिर बात को छिपी रखने के लिये बहुत सी ऐसी युक्तियां की जाती थी जो कि फ़ौजदारी नियमानुसार दण्डनीय हैं, अर्थात् झूठी मोहर लगाई जाती थी तथा स्टाम्प चिपका दिया जाता था"। सच है एक पाप को छिपाने के लिये सौ पाप करने पड़ते हैं और विशेषता यह कि जब पार्ल्यामेंएट में इस विषय पर तर्क वितर्क हो रहा था तो उलटे मेज़िनी पर झूठे कलङ्क लगा दिए गए। मेज़िनी लिखता है कि " जो राजनीतिज्ञ सत्य असत्य में भेद नहीं समझता, उसके लिये किसी दूसरे पर झूठे कलङ्क लगाना कुछ आश्चर्य नहीं। निदान सर जेम्स ग्रेहमको जो कि इस नीच कर्म का कर्ता था, पबलिक में अपने किए पर लज्जित होना पड़ा" ।

इस अवसर पर मेजिनी ने कई लेख लिखे जिनमें उसने अंगरेजी शासन, प्रणाली की खूब धज्जियाँ उड़ाईं और बड़े बड़े दोष निकाले, और फिर यह दिखाया कि किस प्रकार आधिराजिक "राष्ट्रीय राज्य" के स्थिर रखने के लिये ऐसे ऐसे पाप तथा अधम काम आवश्यकीय होते है। उसने इस बात पर खेद प्रगट किया कि " अंगरेजी जाति अपने कर्मचारियों के इस काम पर केवल खेद प्रगट करके रहगई तथा ऐसे सगीन पाप का कुछ दण्ड नहीं दिया, न केवल उन्हें दण्ड ही नहीं मिला, वरन् वे अपने अपने पद पर पहिले जैसे पदाधिकारी बने रहे" । इन्हीं बातों को देख लोग कह उठते हैं कि राजकीय मनुष्य कान्शेन्स (अन्तर्ज्ञान) नहीं रखते अथवा रखते भी हैं तो उनकी कान्शेन्स ऐसी दुर्बल होजाती है कि उन्हें उचित अनुचित में भेद नहीं दिखाता। खेद है कि राजनीति सा पवित्र काम ऐसे नीच दरजे को पहुंच गया है। आधुनिक

राजनीति इसीमें है कि एक जाति दूसरी जाति को परास्त करने का सदा यत्न सोचा करे। यदि सब जातियां परस्पर मित्र भाव रक्खें तो ऐसे नीच कर्म्मों की आवश्यकता न पड़े।

मेजिनी को बचपन से ही दीन दुखियों से बड़ी प्रीति थी और अपने देश के कङ्गाल मनुष्यों को वह विशेष स्नेह से देखता था। सदा इस खोज में रहता कि जहां तक हो सके उनको शिक्षित बनावे और उनकी कठिनाइयों को कम करने की चेष्टा करे, यहां तक कि इङ्गलिस्तान में रह कर उसने उन लोगों को बिसार नहीं दिया था, वरन् उसने उनकी शिक्षा तथा सहायता की एक नवीन उपाय निकाला। एक ठौर वह लिखता है कि "मेरे मानसिक विचार तथा सम्मति का यह स्वाभाविक परिणाम था कि मैं केवल सर्वसाधारणकी सहायता ही न करू, वरन् उन्हीं की भांति अपना काम करूं। जब मैं इङ्गलिस्तान में आया तब मुझे मालूम हुआ कि इटालियन कारीगर कैसे सुशील तथा भले मनुष्य होते हैं। जो वहां के कारीगर मुझे इङ्गलिस्तान में मिले, वे ऐसे सुशील तथा अपनी ओर से बेपरवाह थे कि मुझे उनसे परिचित होकर अत्यन्त हर्ष हुआ। उनसे मेरा परिचय इस प्रकार हुआ कि लण्डन के बाजारों मे जो छोटे छोटे लड़के सारंगी अथवा कोई बाजा बजाते फिरते थे, उनसे कई अवसर पर दर्याफ्त करने से मालूम हुआ कि उनमें से प्रायः बहुत से इटली देश के रहने वाले हैं और यह भी मालूम हुआ कि वे सब दूसरों के दास हैं, जिन्होंने इन सबको इनके माता पिता से मोल ले लिया है, अथवा रुपये की लालच दे कर ले आये हैं और उनसे यह काम लेते हैं और स्वयं लाभ उठाते हैं। मुझे यह हाल मालूम होने पर अत्यन्त दुःख हुआ और मैंने सहस्रों धिक्कार इटली देश के कर्मचारियों तथा पादड़ियों को दी क्योंकि यदि वे चाहते तो

इन अज्ञान बच्चों को इस दासत्व से अवश्य बचा लेते"। मेजिनी ने इन असहाय बच्चों के सहायतार्थ एक सोसाइटी स्थापित की और बच्चों को बेदाम शिक्षा देने के लिये एक खैराती पाठशाला जारी की, जिसमें उन सबको ऐसी शिक्षा दी जाने लगी कि जिसमें वे फिर अपने देश को लौट जांय, तथा अपनी देशोन्नति में तत्पर हों। इन बच्चों के स्वामी इनपर ऐसे ऐसे अत्याचार किया करते, तथा ऐसे निर्दय कठोर हो कर इन्हें मारते कि मेज़िनी ने प्रायः उनको न्यायालय में ले जाकर दण्ड दिलवाया। जब उनपर प्रगट हो गया कि इन अनाथ बच्चों का भी अब कोई नाथ उत्पन्न हो गया है, तब तो वे सावधान हो गए और उनपर अत्याचार करने में कुछ कमी करने लगे। मेज़िनी के इङ्गलैण्ड से चले जाने के पश्चात् यह स्कूल चार पांच वर्ष लों जारी रहा। इसके व्यय का अधिकांश भाग मेज़िनी अपने पास से देता था और स्वयं आप इस में शिक्षा देता था। मेज़िनी एक ठौर लिखता है कि" इन सात वर्षों में मैंने कई सौ लड़कों को व्यवहारिक तथा धार्मिक विषय में शिक्षा दी जो इस के पूर्व निरे असभ्य थे। ये लडके पहिले बड़े भयभीत होते, पर क्रमशः शिक्षकों के प्रेम से हिल गए और बहुतेरों ने अपने देश को लौट जाने की उत्कट इच्छा प्रगट की। रात्रि के समय ८ बजे से १० बजे तक वे मेरे घर रहते। वे अपना अपना बाजा लाते। मैं उन्हें लिखने, पढ़ने, हिसाब तथा भूगोल में शिक्षा देता। प्रति रविवार की सन्ध्या को वे एकत्र होते और अपने देश के किसी महापुरुष के जीवनचरित्र अथवा इटली सम्बन्धीय किसी और विषय पर मैं व्याख्यान देता। दो वर्ष लों मैं इसी प्रकार लेकचर देता रहा, जिसमें से प्रायः एस्ट्रोनोमी के विषय पर लेकचर होते थे, क्योंकि यह एक ऐसा गुरुतम विषय है जिस से मनुष्य का हृदय शुद्ध होता है और उसमें धार्मिक गुणों

का संचार उत्पन्न होने लग जाता है। मेरी सम्मति में तो प्रत्येक मनुष्य को उसकी प्रथमावस्था में इस विषय में शिक्षा देनी उचित है। मुझे यह काम अत्यन्त प्यारा तथा पवित्र जान पड़ता था। दूसरे भाई भी इस काम को बड़ी उत्तेजना से करते और उन्हें इसी काम में अपने देश तथा अपनी जातीय अवस्था पर विचार करने को बहुत समय मिलता। सब लोग इस काम को पवित्र समझ शुद्धान्तःकरण से उसे करते। किसीको कुछ महीना नहीं मिलता। सब लोग मुफ़ में काम करते थे। ये लोग अपने बालबच्चों के निर्वाह के लिये कुछ न कुछ उद्यम अवश्य करते थे। प्रतिवर्ष १० नवम्बर को इसकी वर्षगांठ होती, और सब लड़कों को (जो लगभग २०० के थे) कुछ उपहार दिया जाता। फिर सबकेसब इकट्ठे बैठ कर भोजन करते (जोकि वे लोग स्वयं तैयार करते थे)। जी बहलाने के अभिप्राय से वे कोई जातीय गीत गाते, और इस प्रकार परदेश में स्वजातीय बच्चों के साथ बैठ कर मैं अपने लिये काम में से ही एक प्रकार के सुख की सामग्री जमा कर लेता था। अब यह लड़के यह भली भांति समझने लगे कि वे भी औरों के ऐसी मनुष्य आत्मा रखते हैं और उनपर इस प्रकार अत्याचार करने का किसी को भी अधिकार नहीं है। निदान मैंने इस प्रकार इटालियन कारीगर तथा मजूरों को शिक्षित करके उनमें से थोड़ों को जातीय परोपकार के लिये चुन लिया, और उनके लिये एक एसोसिएशन स्थापित किया, और उसकी ओर से एक पत्र जारी किया"। अपने प्रकार की यह पहिली सभा थी जो मेज़िनी ने दीन दुखियों के हेतु स्थापित की थी। अब तो कोई विरला ऐसा शहर इटली में होगा जहां इस प्रकार की सोसाइटी वर्तमान न हो। इन बातों से विदित है कि मेज़िनी अपने देश निकाले की अवस्था में भी अपने देश की सेवा

में तत्पर रहा। उसको ऐसे कामों से एक प्रकार का आनन्द मिलता था। अपनी जाति की व्यवहारिक तथा राजनैतिक शिक्षा प्रबन्ध को उसने कभी बन्द नहीं किया, कभी पाठशाला द्वारा, और कभी गुप्त प्रेस द्वारा यह काम जारी रक्खा। उसकी चिट्ठियां भी बड़ी ज्ञानोत्पादक होती थीं। इन्हीं चिट्ठियों द्वारा उसने अपनी जाति में "नेशेनल (जातीय) स्वतंत्रता" का भाव उत्पन्न कर दिया था। यहां तक कि सारे देश में एक ऐसा रूपक बन्ध गया जिससे सारा देश वर्तमान कर्मचारियों के विरुद्ध खड़ा हो गया। इसी समय जेरीबाल्डी अमेरिका के दक्षिण विभाग में नाम पैदा कर रहा था, और मेज़िनी उसके कार्यों को प्रकाशित करके योरप में उसकी यश कीर्ति बढ़ा रहा था, जिसका फल यह हुआ कि जब जेरि-बाल्डी सन् १८४८ में लौट कर आया तो सारे देश ने सर्व सम्मति से उसे "लीडर तथा हीरो" मान लिया।

सन् १८४६ में नवां पोप पायस गद्दी पर बैठा और अपने राज्य के प्रारम्भ में उसने सब राजनैतिक अपराधियों के क्षमा की सूचना देदी। उसकी इस कारवाई से लोगों को यह प्रतीत हुआ कि इस के हृदय में जातीय स्वतन्त्रता का भाव अधिक है, जिससे लोगों को अनुमान हुआ कि जातीय स्वतन्त्रता के लिये जो प्रस्ताव किया जायगा। उसकी वह अवश्य पृष्ठपोषकता तथा सहायता करेगा। लोगों ने मेज़िनी को कहना आरम्भ किया कि वह पोप की पार्टी में मिल कर उसको इस ओर उत्तेजित करे। परन्तु मेज़िनी ऐसा मूर्ख नहीं था कि उसके जाल में फस जाता। वह अपनी दीर्घदृष्टि से लख गया कि राजाओं पर कभी विश्वास नहीं करना चाहिए। उसने उत्तर में कहला भेजा कि "यदि पोप एकता का झण्डा खड़ा करे तो सबसे पहिले वह उसके नीचे आ

मिलेगा। परन्तु प्रथम उसको यह मालूम होना चाहिए कि वह झण्डा कहां और किसके निकट है। यदि थोड़े दिनों तक मेरे कहने के अनुसार उसपर कुतवा न लिखा गया तो मुझे कोई सन्देह उत्पन्न न होगा। यदि मैं अपने झडे को छोड़ूं, तो परमेश्वर अपने देश और अपनी आत्मा से मिथ्यावादी ठहरूंगा। मेरी सम्मति में पोप की चित्तवृत्ति सन्मार्ग पर है, पर वह आस्ट्रियन गवर्न्मेंएट के दबाव में होने के कारण घबड़ाया हुआ है। उसे चाहिए कि वह अपने मानसिक भावों को न छिपा कर अपने मनोविचारों के अनुकूल कुछ प्रत्यत्न कर दिखावे। सब लोग उसके विचार तथा कर्म के एक होने में सन्देह करते हैं और यदि वह शुद्धाचरण है तो वास्तव में उसे कुछ प्रत्यत्न कर दिखाना उचित है, कि जिसमें लोगों का सन्देह उसकी ओर से मिट जाय। ऐसा करने पर तब हम-लोग उसकी सहायता करेंगे।

मेज़िनी ने पोप को एक और चिट्ठी लिखी और उसको जताया कि धार्मिक तथा जातीय संशोधन के मैदान में कुछ कर दिखाने का यह बड़ा अच्छा अवसर है। मेज़िनी ने इस चिट्ठी को प्रकाशित करा दिया कि जिसमें उसके स्वदेशियों को यह बात मालूम हो जाय कि पोप को इस समय क्या करना उचित है और वह क्या करते हैं।

६ महीने भी न बीतने पाए थे कि बुलबुला फूट पड़ा। पोप ने देशानुराग का बनावटी आभूपण उतार अपना पहिला तथा वास्तविक वस्त्र धारण कर लिया। उसके दलवालों ने यह प्रचार करना आरम्भ किया कि पोप स्वयं देश की आवश्यकताओं को भली भांति जानते हैं। वे बिना सर्वसाधारण की सहायता के उनकी आवश्यकताओं को दूर करेंगे। पर सर्वसाधारण को अब उनकी बात पर विश्वास न रहा था। सब

१८४७ में लौम्बार्डी तथा १८४८ में सिसिली में विद्रोह खड़ा हो गया और वर्षा ऋतु के मेघ की नांई यह मनुष्य विद्रोह थोड़े काल में सारे इटली देश में फैल गया। आस्ट्रिया देश के राजनीतिज्ञों ने स्पष्ट रीति से यह बात स्वीकार की है कि यह सब मेज़िनी के १७ वर्ष के परिश्रमों का फल है। क्योंकि उसकी उपस्थिति ने इटली की जातीयता के बीज को, जो चिरकाल सें दबा हुआ पड़ा था और कुछ फल नहीं देता था हरा भरा कर दिया, जिसका फल अब यह प्रगट हुआ है कि स्वतंत्रता की दारुण उत्कण्ठा के ओर शब्द से सारा देश गूंज उठा है और चारो दिशा से यही सुन पड़ता है कि आस्ट्रिया के अनुचित शासन को दूर कर दो, और जिस समय तथा जिस ठौर वे मिलें मार डालो। जो सुबे आस्ट्रियन्स के आधीन थे, वहीं नहीं, वरन् सिसिली में भी यही भाव फैल रहा था। दक्षिण में सिसिली से प्रारम्भ होकर उत्तर में वेनिस तक इस भाव की लहर पहुंच गई थी। ऐसा जान पड़ता था कि सारा देश सर्वसम्मत हो स्वतंत्रता के लिये इच्छा कर रहा है। सारे इटली निवासी इस बात पर एक मत हो रहे थे कि जिस प्रकार होसके आस्ट्रिया को अपने देश से निकाल दें। ऐसा जान पड़ता था कि स्वतंत्रता लाभ करने के लिये सारे देश ने सब बैर विरोध दूर कर दिया है, और इस बात पर सब एक हो गये हैं कि जातीयता स्थापित करने के लिये अन्य जातीय शासन से स्वाधीन होना सबसे पहिला कर्तव्य है। सन् १८४४ में नेपल्स में बेन्डियरा नामक दो भाइयों ने फ्रांस के विपक्ष विरोध करने का विचार किया। इनको अपनी सफलता का पूर्ण विश्वास तो न था, परन्तु केवल अपनी जाति में उत्साह उत्पन्न कर देने के लिये इन्होने अपनी जान ओखिम में डाल विद्रोह खड़ा कर दिया। वे

लिखते हैं कि "जब हमें यह ज्ञान हो गया कि प्रत्येक देशवासी का अपने देश को अन्य जातीय शासन से संरक्षित रखना परम कर्तव्य है, तो फिर विलम्ब करना पाप था। हम दोनों भाई इसके लिये अधीर हो रहे थे कि इस पुण्य के काम में कुछ कर दिखा आदर्श खड़ा कर देना चाहिए जिससे जातीय रक्त उत्साहित तथा उत्तेजित हो जाय" उनका सिद्धान्त था कि "इटली अब ही सावधान तथा चैतन्य रह सकती है जब इटलीवासी अपनी जन्मभूमि के लिये जान देना सीखेंगे, और इस भाव का प्रचार केवल इसी रीति से हो सकता है कि यहां वाले स्वयं मर कर औरों के लिये दृष्टान्त खड़ा करदें"।

ये दोनो भाई एक आस्ट्रियन एडमिरल के लड़के थे। किसी कारण विशेष से अपने देश तथा अपनी जाति से विरक्त हो इटली देश हितैषी बन गए और यह विद्रोह फ्रान्स के विरुद्ध खड़ा कर दिया। मेज़िनी को इन दोनों ने लिखा कि "यदि हम इस उद्योग में मारे गए तो हमारे देशवासियों से कह देना कि हमारे दृष्टान्त के अनुगामी बनें, क्योंकि यह जीवन हमलोगों को सत्कर्म तथा परोपकार करने ही के लिये मिला है"। जिस समय मेज़िनी को इन शेर भाइयों के दृढ़ विचार का समाचार मिला, तो उसने बड़ी चेष्टा की कि किसी ढंग से वे अपने विचार से वर्जित रहें, क्योंकि मेज़िनी यह सोचता था कि एक महान् कार्य्य के पूरा करने के लिये समय निकट पहुंचता जाता है और ये दोनों दृढ़ आत्माएं इस समय वृथा नष्ट जांयगी। परन्तु अङ्गरेज़ी राजनीतिज्ञों ने जो चोरी से चिट्ठियां खोली थीं, उनसे फ्रांस तथा आस्ट्रियन राज्यों को इनसे पूरी अभिज्ञता हो गई और उक्त दोनो राज्य उनके खून के प्यासे हो गए और जासूस लोगों की मिथ्या रिपोर्ट पर दोनो भाई गोली से मार दिए गए। इस प्राणवध

का परिणाम यह हुआ कि पहिले तो लोग बहुत उत्साह हीन हो गए, परन्तु शीघ्र ही उनके बलिदान ने लोगों के चित्त में स्थान बना लिया। सन् १८४६ में पोप के विरुद्ध तथा १८४७ में आस्ट्रिया के विरुद्ध बैर विरोध फैल गया और इसी वर्ष में सिसिली निवासियों ने नेप्ल्स राज्य के विरुद्ध बलवा करके विजय प्राप्त की। इन बलवों के मुखिया बराबर मेज़िनी से चिट्ठी द्वारा सम्मति लेते रहे और पेडमान्ट तथा टसकनी की नेशनेल पार्टी से परस्पर पत्र व्यवहार जारी रक्खा। अब सन् १८४८ में जब लोम्बार्डी निवासियों ने आस्ट्रियन्स के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा खड़ा किया, तो इस समाचार के फैलने पर इटली के हर एक भाग से प्रसन्नता तथा सहानुभूति प्रगट की गई। प्रत्येक सूबे में स्वतः वालन्टियर कम्पनियां बनने लगीं। सर्वसाधारण में इतना उत्साह फैल गया कि बादशाह को भी उनके साथ हो जाने के अतिरिक्त और कोई उपाय न देख पड़ा, यहां तक कि टसकनी के बादशाह को भी अपने राज्य बचाने का कोई दूसरा उपाय न मिला और इस लिये आस्ट्रियन्स के विरुद्ध लड़ाई की सूचना भिजवा दी। जेनेवा में सबसे पहिले वालन्टियर एकत्र हुए। परन्तु अभी मार्च महीना न बीतने पाया था कि दस हज़ार रोमन्स तथा सात हज़ार टसकनी वाले अस्त्र से लैस हो अपने लोम्बार्ड भाइयों की सहायता के लिये प्रस्तुत हो गए, यहां तक कि इटली के धनाढ्य लोगों में अब देशहितैषिता तथा स्वदेशानुराग का उत्साह फैल गया। और इन लोगों ने बिना ब्याज के बड़ी बड़ी रकमें मिलन की "प्रोविज़नल गवर्मेन्ट" को उधार दीं। वालन्टियर सेना ने पराजित आस्ट्रियन सेना का पीछा आल्प्स पर्वत तक किया और इङ्गलिश गवर्मेन्ट के भेदियों की रिपोर्ट से सिद्ध होता है कि इस बलवे से एक महीने के अन्दर

इटली देश में केवल ५० हजार आस्ट्रियन्स शेष रह गए थे और वे सब भी खलबली तथा व्याकुलता की अवस्था में थे।

अब सर्वसाधारण को विश्वास हो गया कि मेज़िनी के सिद्धान्त तथा उपदेश सच्चे थे। सन् १८२१ तथा सन् १८३३ में जो बलवा और विद्रोह हुआ वह वृथा गया, क्योंकि इसके प्रधान मनुष्यों ने सर्वसाधारण से सहायता नहीं ली थी। परन्तु सं० १८४५ तथा सं०१८४८ के बलवे सफल हुए, क्योंकि अब की सर्वसाधारण सहायता के लिये उठ खड़े हुए थे। पर यह सब कुछ मेज़िनी तथा उसकी "यङ्ग इटली" नामक सोसाइटी:की शिक्षा का फल था। जिन लोगों ने इस बलवे में अपने को बलिदान किया, उनमें से $\frac{९}{१०}$ भाग सर्वसाधारण मनुष्यों में से था। ऐसा जान पडता है कि इस बात ने राजनीतिज्ञों के हृदय पर बहुत बड़ा प्रभाव उत्पन्न किया जैसा कि उसी समय के एक आस्ट्रियन राजनैतिज्ञ की सम्मति से सिद्ध होता है। ये महाशय लिखते हैं कि "इटली निवासी इस समय सीधे पञ्चायती राज्य के मार्ग की ओर जा रहे हैं"। परन्तु अभी इटली के बुरे दिन समाप्त नहीं हुए थे। सर्वसाधारण के अशुभचिन्तकों ने शाह पेडमान्ट के निकट एकत्र हो उनको पञ्चायती राज्य के विचार से फेरने के हेतु एक सभा स्थापित की। मेज़िनी ने इस मतवालों के खण्डन में बड़ी उत्तेजना की। उसने चेताया कि "सिद्धान्त को छोड़ कर जो लोग समय के मिथ्या फन्दे में फंस जाते हैं, सुमार्ग को त्याग मिथ्या लौकिक व्यवहार को ग्रहण करते हैं तथा अपने कर्त्तव्य को तज स्वार्थपरता के अनुचर बनते हैं, उसका परिश्रम कदापि फलदायक नहीं होता"। उसके जीवन का बाकी हिस्सा इसी शिक्षाप्रचार में बीता, क्योंकि इस स्वार्थी पार्टी ने लोगों का कान भरना प्रारम्भ कर दिया और उनको बहका कर वे कुमार्ग पर

से आप। इस पार्टी ने अपना नाम 'माडरेट' पार्टी रक्खा था। मेज़िनी ने प्रकाशित किया कि "इस पार्टी का नाम ही कहे देता है कि यह जाति की वैरी है, क्योंकि जहां यह प्रश्न है कि जीवन मिलेगा अथवा मृत्यु, स्वजातीय स्वतन्त्रता प्राप्त होगी अथवा परतन्त्रता, तो ऐसे प्रश्न के उत्तर में कोई मध्यस्थ मार्ग कदापि नहीं बता सकता। यह पार्टी केवल यह चाहती है कि स्वतन्त्रता की झलक दिखा कर राष्ट्रीय राज्य को स्थिर रक्खें, अर्थात् 'राष्ट्रीय राज्य' को ऐसा दृढ़ बना दे कि फिर लोगों के हृदय में कभी स्वतन्त्रता की इच्छा उत्पन्न भी न हो। उनको आप इतना अधिकार मिल जावे कि वे अपनी सम्मति स्वाधीनता पूर्वक प्रगट कर सकें, तथा नियम-संग्रह करने वाली सभा के सभासद नियुक्त किए जांय। सर्व साधारण यदि रसातल को मिल जाय तो मिलजाय, पर वे इसी में प्रसन्न थे कि उनके समान अधिकार सर्वसाधारण को कभी न दिया जाय। उनको यह भ्रम था कि ऐसा न हो कि सर्वसाधारण को अपने अधिकारों का ज्ञान हो जाय और फिर हमारा निरादर होने लग जाय। वे लोग असम्भव को सम्भव किया चाहते थे"। बहुतेरे तो यह चाहते थे कि इटली कभी एक मत न हो, और लगभग सभी इस विषय में सहमत थे कि इटली का सयोग कभी संभव नहीं है। वे यह विचारते थे कि यदि भिन्न भिन्न प्रान्तों के कर्मचारियों में मित्रभाव हो जाय तो बहुत अच्छा होगा, और वे इस धुन में थे कि इटली को तीन प्रान्तों में विभाजित कर देना चाहिए, अर्थात् दक्षिण प्रान्त शाह पेडमान्ट के आधीन होकर रहे, उत्तर विभाग फ्रांस के आधीन तथा मध्यप्रदेश पोप के शासन में रहे। मेज़िनी आगे ही से चिल्लाता था कि ये लोग पोप से निराश होने पर किसी और का पक्ष ले लेंगे। मेज़िनी को

एकता का बड़ा ध्यान रहता था। यद्यपि वह शाह अलबर्ट को बड़ी ग्लानि की दृष्टि से देखता था, क्योंकि उसने उसके अच्छे अच्छे मित्रों की जान ले डाली थी, यद्यपि वह उसकी इस कायरता को बड़ी घृणा से देखता था परन्तु फिर भी वह यही कहता था कि यदि मुझे इस बात का विश्वास हो जाय कि चार्लस अलबर्ट के हृदय में यथोचित उत्साह तथा दृढ़ प्रतिज्ञा सारे इटली को एक करने के लिये विद्यमान है, तो मुझे भी अस्तु कहकर उसके साथी हो जाने में कुछ और विचार न होगा। परन्तु इस 'माडरेट पर्टी' का न तो वास्तव में यह अभिप्राय था और न उन्हें यह विश्वास था कि इटली देश एक हो जायगा। सन् १८४८ में जो विद्रोह मिलन में हुआ उसके लिये वे तैयार नहीं थे, वरञ्च इसकी ओर से निरे बेसुध थे, क्योंकि यह विद्रोह उस सर्वसाधारण के दलवालों ने किया था जिनको वे तुच्छ समझे हुए बैठे थे। ,जब युद्ध प्रारम्भ हो गया, तब लोग अपनी स्वतन्त्रता के लिये तीन दिन तक बराबर लड़ते रहे। तब भी अपने मुंह मियां मिट्ठू बन म्युनिसिपल कर्मचारियों ने एक सूचना पत्र प्रकाशित कराया, जिसमें इस बात पर खेद प्रगट किया कि क्यों नियमानुसार युक्तियां छोड कर बल से काम लिया जाता है। फिर अन्त में मेल के लिये प्रस्ताव किया, पर लोगों ने इस सूचना की ओर ध्यान तक नहीं दिया और पांच दिन तक बराबर लड़ते रहे. जिसमें आस्ट्रियन सेना के चार हज़ार मनुष्य मारे गये, और जो बचे थे वे भाग गये। इसके पश्चात् वेनिस में विद्रोह का आरम्भ हुआ। ऐसी प्रबल शीघ्रता से कार्रवाई हुई कि इटली से आस्ट्रिया जाने के सब रास्ते वालन्टियर सेना ने अपने अधिकृत कर लिए जिससे आस्ट्रियन सेना को भाग जाने का भी मार्ग न रहा। उधर उनकी

सेना में एक और उपद्रव उठ खड़ा हुआ, अर्थात् जो इटा-लियन रेजिमेन्ट उनकी सेना में थी, वह बिगड़ खड़ी हुई। आस्ट्रिया के तीन जंगी बेड़े जो इटालियन मल्लाहों के हाथ में थे, वेनिस की स्वजातीय सभा के आधीन हो गए। ये कार्रवाइयां देखकर 'मोडरेट पार्टी' के तो होश उड़ गये और तब उनको यह ज्ञात हुआ कि यदि इस समय कोई राजवंश वाला प्रजा का पक्ष न लेगा तो "राष्ट्रीय राज्य" प्रणाली का अब अन्त हो जायगा। लोगों का हृदय उत्साह से परिपूर्ण था और उनका उत्साह सफलता को प्राप्त होने के कारण और भी उत्तेजित होता जाता था। 'यङ्ग इटली' की शिक्षा अब फल दे रही थी और लोगों को यह शिक्षा मिल रही थी कि अपने देश को अन्य जातीय शासन से यों बचाना चाहिए।

विपरीत दल वालों को अब यह चिन्ता उत्पन्न हुई कि यदि ये लोग इसी प्रकार सफलता को प्राप्त होते चले गए, तो शीघ्र ही सारे देश में पञ्चायती राज्य स्थापित होजायगा, और अधिराजिक राज्य जड़ मूल से नष्ट हो जायगा। इन्हीं बातों को सोच इस पार्टीवालों ने चार्लस अलबर्ट के समीप दूत दौड़ाया, और उससे सहायता की प्रार्थना की। पहिले तो शाह बड़े चक्कर में रहा, वरन दूत से भेंट भी नहीं की। वह यह विचारता था कि युद्ध में कहीं निष्फलता न प्राप्त हो और तब संसार में लज्जित होना पड़े। पर जब उसने यह देखा कि मिलन की काया एक प्रकार से पलट गई है, तो उसने दूसरे विभागों में युद्ध जारी रखने के लिये सेना से सहायता करने के लिये उनको वचन दिया; पर इस नियम पर कि मिलन देश में एक प्रोवि-जनल गवर्न्मेंएट स्थापित हो, जो इस बात की प्रतिज्ञा करे कि इस सहायता के प्रतिकार में लोम्बार्डी प्रदेश शाह पेडमान्ट के अर्पण किया जायगा। इस दल के एक सहयोगी कौन्ट

मारटिनी नामक ने, जो इटली के प्रदेशों का इस प्रकार सौदा करता फिरता था, यही प्रस्ताव मेजिनी के एक मित्र से किया। पर मेज़िनी के दलवाले कब ऐसे प्रस्तावों का अनुमोदन कर सकते थे? मेज़िनी एक ठौर लिखता है कि "जो मनुष्य अपने देश की रक्षा के लिये, तथा अपनी जातीय स्वतंत्रता के लिये लड़ता है और इसका विचार भी नहीं करता कि उसके उद्योग अथवा उसकी सफलता से कौन लाभ उठायगा, उसकी जाति उसका बड़ा आदर सत्कार करती है और परमेश्वर उस पर दया करता है"। जब आस्ट्रियन जेनरल अपनी बची बचाई सेना लेकर मिलन से भागा और पेडमान्ड तथा सारडीनिया के वालन्टियर लोम्बार्डी प्रदेश में प्रविष्ट हो गये, तब चार्लस अलबर्ट ने देखा कि अब पीछे रहने तथा शान्त भाव बरतने से लोम्बार्डी प्रदेश लेने का अवकाश भी हाथ से जाता रहेगा तथा मेरा राज्य भी जोखिम में पड़ जायगा। इसलिये उसी दिन उसने आस्ट्रिया के विरुद्ध युद्ध की सूचना दे दी और छिपे छिपे योरप की समस्त राजधानियों को यह विश्वास दिला दिया कि मेरा आन्तरिक अभिप्राय इस कार्रवाई से यह है कि विद्रोह की लहर को रोकूं, तथा लोगों को अपनी ओर मिलाकर "यंग इटली" के यश को नष्ट कर दूं। अङ्गरेजी समाचार-दाताओं ने इस समय अपनी गवर्न्मेन्ट को यह रिपोर्ट दी कि "अलबर्ट का राज्य इस समय बड़े कष्ट तथा जोखिम में है और यदि लोम्बार्डी में पंचायती राज्य-शासन स्थापित हो जाय तो पेडमान्ट में अधिराजिक शासन का रहना असम्भव है, क्योंकि सारे देश में क्रोधाग्नि फैल रही है और लोग स्वजातीय स्वतन्त्रता के लिये अत्यन्त उत्साहित हो रहे हैं।" बादशाह की धूर्तता तो इसी से प्रगट होती है कि लड़ाई की सूचना देने के पश्चात् भी पेडमान्ट

के राजनीतिज्ञों ने अङ्गरेज़ी एजेण्ट द्वारा लार्ड पाम-र्स्टन को यह संदेसा भेजा कि लड़ाई केवल इसलिये प्रारम्भ की गई है कि उन प्रदेशों में जहां लोगों के विद्रोह के कारण अब कोई स्वामी नहीं रहा है, शासनीय प्रबन्ध स्थिर रक्खें, क्योंकि यदि गवर्न्मेन्ट पेडमाएट ऐसा न करती तो स्वयं उसकी प्रजा में विद्रोह फैल जाता। पेडमाएट के राजनीतिज्ञों ने योरप की राजधानियों पर यह प्रगट किया कि उन्होंने केवल "अधिराजिक शासन" की मान मर्यादा बनी रहनेके लिये लड़ाई की सूचना देकर अपने आपको जोखिम में डाल दिया है। योरप में जहां यह प्रगट किया गया था, वहां लोगों को और ही धोखा दिया गया। उस सूचना पत्र में लिखा था कि "बादशाह अपनी प्रजा को ऐसी सहायता देनेके लिये आया है, जैसी कि आवश्यकता पड़ने पर भाई को भाई की करनी चाहिए। उधर मिलन की 'प्रोवि-ज़नल गवर्न्मेन्टने, लोगों को धीरज देने के लिये एक सूचना पत्र प्रकाशित कराया कि लड़ाई के समाप्त होने पर लोगों को स्वयं अधिकार होगा कि वे अपने लिये गवर्न्मेएट स्थापित करें, तथा शासन की रीति अपनी रुचि के अनुकूल नियत करें और अन्त में प्रतिज्ञा की कि युद्ध उस समय तक जारी रहेगा जब तक सारा देश स्वतंत्र न हो जाय और तब हर एक मनुष्य को अपनी सम्मति देने का अधिकार होगा। मेज़िनी ने भी इस प्रोग्राम को स्वीकार किया। यद्यपि मेज़िनी को बादशाह की वञ्चकता का ज्ञान न था तथापि उसे उस पर पूर्ण विश्वास भी न था और यदि उसने उसके प्रोग्राम को स्वीकार किया, तो उसका कारण यह था कि जिसमें लोगोंको मालूम हो जाय कि मेज़िनी अपने सहमत सहचारियों की सहायता करने को सदा प्रस्तुत रहता है। यह विचार उसने अपने दलवालों को भी उत्तेजित कर

दिया कि वे सब भी प्रोविज़िनल गवर्न्मेंएटकी सहायता करें और जब तक युद्ध जारी रहे तब तक राजनैतिक उपदेश के काम को बन्द करके अपना सब पराक्रम अपने देशको अन्य जातीय शासनसे छुड़ानेमें लगावें, कि जिसमें लोग स्वाधीन होकर अपनी रुचि अनुसार शासन प्रबन्ध निर्णीत करें; परन्तु मेजिनीके गुणोंको न विचार उसके विषय में ऐसा दोषारोपण हो रहा था, तथा उस पर ऐसे आक्षेप किये जाते थे कि मेजिनी स्वयं लिखता है कि "ऐसे कलंक मुझपर कभी यावज्जीवन नहीं लगाये गये"। "मोडरेटपार्टी" ने इस विषय में भी मेजिनीको धोखा दिया और फिर उसीको दोषी ठहराया। वे प्रतिज्ञा कर चुके थे कि सफलता प्राप्त होने पर लोम्बार्डी प्रदेश पेडमांट राज्य में मिला लिया जायगा। इसलिये उनको अब यह सोच उत्पन्न हुआ कि यदि बादशाह स्वयं अपने बाहु-बल से जय प्राप्त करेगा तभी वह इस उपहार का उचित अधिकारी हो सकता है और तभी लोग आस्ट्रियन गवर्न्मेंएट से अप्रसन्न हो इसके शासनको स्वीकार कर सकते हैं। इसी अभिप्राय के अनुसार बड़ी सावधानी से बादशाही सफलताओंका सूचनापत्र मिलनकी दीवारों पर चिपका दिया जाता था। परन्तु बादशाही जरनैलों की अल्प बुद्धि से आस्ट्रियन सेना फिर सबल हो चली। वालन्टियर सेना को जो पहाड़ी रास्तों की रक्षा करती थी, बादशाह ने बुला कर अपने अपने घर चले जाने की छुट्टी दे दी। अब इन रास्तों के खुल जानेसे आस्ट्रियन्स के सहायतार्थ और सेना आपहुंची और उनके रसद इत्यादि का भी उचित प्रबन्ध हो गया। जब आस्ट्रियन सेना ने एडविन का गांव विजय कर लिया तो 'प्रोविज़नल गवर्न्मेंएटको चिन्ता उत्पन्न हुई और उसने मेज़िनी को बुलवा भेजा और उससे अनुमति पूछी कि किस रीति से प्रजा को इस दुर्घटना की सूचना दी जाय जिनको अबलों 'जय

जय' के मिथ्या भ्रम में फंसा रक्खा गया है क्योंकि अब दो ही उपाय बच गए थे, या तो यह कि फिर आस्ट्रियाकी आधीनता स्वीकार की जाय, या सर्वसाधारण से सहायता लेकर फिर से युद्ध किया जाय। मेज़िनी ने उनसे सविनय कहा कि " जो कुछ यथार्थ बात है उसे तत्क्षण सर्वसाधारण पर विदित करके पुनः सहायता की प्रार्थना की जाय, तथा वालन्टियर सेना पुनः एकत्रित की जाय " मेज़िनी ने यह भी प्रतिज्ञा की कि यदि मुझे अपना नाम सबसे पहिले सूचीपत्र में लिखने की आज्ञा मिले तो मैं मिलन में एक कम्पनी सन्नद्ध कर दूंगा। पहिले तो मेज़िनी को आज्ञा मिली पर फिर उसका उल्लंघन कर दिया गया, इस कारण कि बादशाह यह नहीं चाहता था कि उसके साथ शत्रुओं की इतनी सेना दल रहे (क्योंकि बादशाह वालन्टियर सेना को शत्रु समझता था)। अब एक और रचना रची गई और उसीसे मेज़िनी को जाल में फंसाने का यत्न किया गया। अब मेज़िनी को यह लालच दिया गया कि "यदि वह इस पराजय को प्रकाशित न करे, तथा लोम्बार्डी प्रदेश किसी प्रकार पेडमान्ट में मिला देने में यत्न करे, तो इसके प्रत्युपकार में दक्षिण प्रदेश के नियम संग्रह करने का अधिकार उसे दिया जायगा तथा वह बादशाह के महामन्त्री के उच्चपद पर नियुक्त कर दिया जायगा। परन्तु मेज़िनी ने तो इटलीको स्वाधीन करने का बीड़ा उठाया था जिसके लिये वह यावत् सांसारिक वस्तुओंको तुच्छ समझता था। उसने यह विचारा कि इस समय आस्ट्रिया के साथ युद्ध जारी रखना परम आवश्यक है और दक्षिण प्रदेश में राज-शासन स्थापन करना अत्यन्त बुरा होगा, क्योंकि इस प्रकार पेडमान्ट राज्य की वृद्धि देख और राजधानियां अपमान-वश क्रुद्ध हो जांयगी और एक सम्मत होने के अतिरिक्त द्वेषाग्नि

फैल जायगी। इसलिये उसने यह विचारा कि देशको स्वाधीन करनेके लिये फिर से लड़ाई का बीड़ा उठाया जाय। उसने प्रत्युत्तर में बादशाह को कहला भेजा कि यदि बादशाह में इतना सामर्थ्य तथा पुरुषार्थ है कि सारे इटली देश का अनुशासक बनने के लिये इटली देश के दूसरे राजों से लड़ाई का झंडा खड़ा करे, तो मैं भी अपने सब मित्रों सहित उसकी सहायता करूंगा। उस दूत ने मेज़िनी से पूछा कि तुम किस प्रकार से अपना विश्वास कराया चाहते? तो मेज़िनी ने एक पत्र में कुछ लिख कर दिया और कहा कि यदि बादशाह इस पर अपना हस्ताक्षर बना दें तो मैं सन्तुष्ट हो जाऊंगा। परन्तु बादशाह ने ऐसा करना अस्वीकृत किया, जिससे मेज़िनी को भी विश्वास हो गया कि उसके चित्त में कुछ छल है और तब उसने उससे कुछ भी सहायता की आशा न रक्खी।

निदान जब आस्ट्रियन सेना को निरन्तर जय प्राप्त होती गई तो इस नीच 'माडरेट पार्टी' ने लोगों का यह कान भरना प्रारम्भ किया कि "अब अधिक सेना की आवश्यकता है, सो तुम लोग यदि जय प्राप्त होने पर लोम्बार्डी प्रदेश प्रत्युपकार में देनेकी प्रतिज्ञा करो, तो हम सब सेना से तुम्हारी सहायता कर सकते हैं"।

सर्वसाधारण लोग इस छल को न समझ सके और इसके लिये वोट पास कर दिया। कुछ हो या न हो, पर बादशाह, की आन्तरिक मनोकामना तो सिद्ध होगई। 'माडरेट पार्टी' ने इस पर बड़ी प्रसन्नता प्रगट की। फिर इस रीति से वेनिस वालों से भी यही वोट पास करा लिया। एक गुप्त सन्धिपत्र में बादशाह ने वेनिस का नगर आस्ट्रिया को देने के लिये लिख दिया था। इसके दो दिन पश्चात् उसने दो कमिश्नर वेनिस नगर पर अधिकार जमाने के लिये भेजे। सारांश यह

कि इसी छल तथा मिथ्या वार्तों से उसने अपनी मनोकामना पूरी कर ली। किन्तु उसकी सेना आस्ट्रियन सेना के सन्मुख न ठहर सकी और जब उसकी सेना भाग कर मिलन में आई तो लोगों को मालूम हुआ कि यह कपट उनसे किया गया था। अब फिर प्रजा ने मेज़िनी से प्रार्थना की कि बचाव की कोई युक्ति निकाली जाय और 'प्रोविजनल गवर्न्मेन्ट' की बात पर अब विश्वास न किया जाय परन्तु मेज़िनी ने उनकी प्रार्थना अस्वीकार की, क्योंकि ऐसा करने से परस्पर विरोध हो जाने का सन्देह था, और न केवल देशोद्धार की आशा ही न टूट जाती, वरन् मेज़िनी के दल वालों पर एक कलङ्क सदा के लिये लग जाता। बादशाह को वोट से यह अधिकार मिल गया था कि वह मिलन को अपने राज्य में मिला ले। इस अवस्था में यदि मेज़िनी प्रजा की प्रार्थना स्वीकार करता, तो बादशाह से भी युद्ध आरम्भ हो जाता और आपस के युद्ध से अवकाश पा आस्ट्रिया भी अपना काम निकाल लेता। मेज़िनी लिखता है कि "इसी कारण मैंने उनकी प्रार्थना अस्वीकार की और दूसरों को भी ऐसा करने के लिये अनुरोध किया। मैंने तो पहिले ही से युद्ध का परिणाम सोच लिया था। मुझे तो आगम भास गया था कि बादशाही सेना परास्त होगी और फिर देशोद्धार की कोई युक्ति न रहेगी।

परन्तु होनहार को कौन मेट सकता है? निदान वही हुआ जो मेज़िनी ने सोचा था। बादशाही सेना प्रत्येक स्थान पर हारती गई और अन्त में ऐसी तितिर बितिर होगई कि माडरेट पार्टी ने भी लज्जित हो अपनी मूर्खता मान ली। परन्तु समय बीते अब पश्चाताप से क्या होता था। इस नैराश्य में उन लोगों ने पुनः मेज़िनी से सहायता तथा उसकी सम्मति मांगी। जिस मेज़िनी के विषय में उन लोगों ने ऐसे

दोषारोप किए थे, तथा जिसे कलङ्कित ठहराया था, आज उसीसे फिर सहायता के प्रार्थी हुए। हा! सत्य की भी क्या ही महिमा है! अन्त में सदा सत्य ही की जय होती है। मेजिनी ने अब यह विचारा कि कदाचित् फिर लोगों में उत्साह उत्पन्न हो जाय, और लोग जान तोड़कर आस्ट्रिया से लड़नेको परस्तुत हो जांय, इसलिये उसने एक 'डेफेन्स कमेटी' स्थापित की। उसने पहिले ही से ऐसे प्रबन्ध किये जिनमें प्रजा स्वयं अपनी रक्षा करे। ऐसे दुष्काल में पुन. मेज़िनी का यश फैलने लगा। लोग पुनः सचेत हो गए और अत्योत्साहित हो अपने नगर की रक्षा के हेतु सेना संयुक्त करने लगे और जान लेने देने में प्रसन्नता पूर्वक कटिबद्ध हो गए।

जब यह सब प्रबन्ध बड़ी उत्तेजना से हो रहा था, तो मालूम हुआ कि बादशाह भी उनकी रक्षा के लिये स्वयं चला आ रहा है। फिर मेज़िनी की आशा मन्द हो गई। बादशाह की ओर से दो कमिश्नर शहर में आए और उन्होंने सब शासनीय प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया। शाही प्रासाद की खिड़कियों से उन्होंने लोगो को अपनी ओर इङ्गित करके वक्तृता दी और बहुत समझाया। मेजिनी को टोह लग गई कि सर्वसाधारण फिर उनके मायारूपी जाल में फँस गए हैं, और तब उसका बचा बचाया उत्साह सब बुझ गया। लोगों ने कमिश्नरों के कथन पर विश्वास करके यह विचारा कि अब हमारा उद्धार हो गया, तथा हम विपद से बच गए। मेज़िनी ने परम आकुलता से शहर छोड़ दिया, और जेरिबाल्डी की सेना में जा मिला। दूसरे दिन बादशाह शहर में प्रविष्ट हुए, और प्रजा को बचन दिया कि वे शहर की रक्षा में अन्तकाल तक कटिबद्ध रहेंगे, यद्यपि दो दिन पहिले वे आस्ट्रियन सेनापति के साथ प्रतिज्ञा कर चुके थे कि मिलन उनको दे

लिया जायगा। दिन में तो महल की खिड़की से लोगों को यह कहा कि मैं और मेरा पुत्र शहर की रक्षा में कदापि किसी प्रकार की असावधानी न करेंगे, और रात्रि को चुपके से पीछे के मार्ग से भाग निकले। सेना को दीवारों पर से हटा लिया और शहर को आस्ट्रियन सेना के अधिकारमें छोड़ आप अपनी राजधानी को सिधारे। आस्ट्रियन सेना तत्क्षण सारे शहर में घुस आई। बादशाह की ओर से तो यह अधम नीचता की गई। उधर देशानुरागियों का प्रबन्ध भी देखने योग्य है। जिस समय मिलन में यह हो रहा था, उस समय जेरिवाल्डी थोड़ी सी वालन्टियर सेना सहित बरगिज़ो नगर में उपस्थित था, और बादशाह का वचनबद्ध विचार सोचता था कि वह पचास हजार सेना से शहर की रक्षा अवश्य करता होगा, और यह विचार अपनी छोटी सेना लिये आगे बढ़ा चला आता था कि यथाशक्ति वह भी सहायता करे। हम ऊपर लिख चुके हैं कि मेज़िनी मिलन से निकल वालेन्टियर सेना में आमिला। जिस समय वह आया, उस समय का दृश्य देखने योग्य था। कांधे पर बन्दूक रक्खे वह प्रार्थना करता था कि उसका नाम भी एक साधारण सिपाही की नाईं सूची में चढ़ाया जावे। परन्तु उसे देखते ही तत्क्षण सारी सेना ने स्नेह पूर्वक उसको सलामी दी, और सबने सर्व सम्मति हो अपना स्वजातीय झण्डा, जिसपर ये शब्द लिखे थे कि "ऊपर परमेश्वर नीचे मनुष्य जाति" उसके हवाले किया। इस कूच में इन लोगों को अत्यन्त क्लेश हुआ मूसल धार वर्षा हो रही थी, हरएक मनुष्य भीगी बिल्ली के समान हो रहा था। यद्यपि मेज़िनी ने अपना यावज्जीवन ग्रन्थ ावलोकन में व्यतीत किया था, तथा इस प्रकार के दुःख क्लेश का अभ्यस्त न था, यद्यपि उसके मित्रों ने बड़ी प्रेरणा की कि तुम

ठहर जाओ, परन्तु उसने एक भी न सुना और बड़ी उत्तेजना से उन लोगों का साथी बना रहा। एक युवा वालन्टियर के देह पर केवल एक महीन वस्त्र था, जिससे वर्षा तथा शीत का कुछ भी बचाव नहीं हो सकता था। चट मेज़िनी ने अपना कोट उतार उसको दे दिया और उसे बहुत कह सुन के पहिराया। जब मुनज़ा में पहुंचे तो समाचार मिला कि मिलन तो शत्रुओं के हस्तगत हो गया और आस्ट्रियन सवारों का एक बड़ा दल हमारे साथ लड़ने को खड़ा है। जेरिवाल्डी ने ऐसे बड़े सेना दल से युद्ध करना वृथा जान पलटने की आज्ञा दी। एक करनल लिखता है कि "इस कूच में जो जो कठिनाइयां आगे आईं, उसे मेज़िनी ने अत्यन्त दृढ़ता, सन्तोष तथा वीरता से सहन किया, कदापि पीछे न रहा। इस बेर उसने बड़े बड़े वीर पुरुषों से भी प्रशंसा प्राप्त की। उसकी उपस्थिति, उसके दृष्टान्त, तथा उसके उपदेश से सिपाही दल अत्यन्त उत्तेजित बना रहा, यहां तक कि प्रत्येक वालन्टियर सिपाही देश के हेतु अपने प्राण देने में अपना गौरव समझता था। इस अवसर पर जो आचरण उसका रहा, उससे लोगों को पूर्ण विश्वास हो गया कि वह केवल राजकीय विषयक कामों के ही योग्य नहीं है, वरन् वह वीरता तथा पराक्रम में भी निपुण है"। मिलन पर अधिकार पाते ही सारा लोम्बार्डी प्रदेश उनके पंजे में आगया। जेरिवाल्डी और उसके सिपाही बड़ी वीरता से लड़ते रहे, परन्तु अन्त में ऐसे भारी दल से अधिक युद्ध का पुरुषार्थ न देख भाग खड़े हुए। मेज़िनी और उसके मित्रों ने बड़ी चेष्टा की कि पहाड़ी जातियों में देशभक्ति का उत्साह बढ़ा उनको युद्ध पर उद्यत करें। परन्तु उसका परिश्रम निष्फल हुआ, क्योंकि उस दुष्ट "माडरेट पार्टी" ने उनको कुछ न करने दिया। निदान वहां से निराश हो स्वी-

ज़रलेन्ड में जा मेज़िनी ने अपने देश के युवकों के लिये एक छोटा सा पत्र प्रकाशित किया, जिसमें वह इस बात को भली भांति प्रकाशित करता रहा कि इस बेर की निष्फलता का क्या कारण है। वह इस पत्र में बराबर यह दिखाता रहा कि " जो मनुष्य या समाज सिद्धान्त को छोड़ समयानुसार काम करते हैं, उनका परिश्रम यों ही व्यर्थ हुआ करता है "। एक ठौर बड़े क्रोधपूरित शब्दों में इटली निवासियों को यह चेतावनी दी है कि " असत्य सेवन से कदापि कोई जाति उन्नति नहीं कर सकती "। मेज़िनी लिखता है कि " यद्यपि मुझे यह पहिले ही से भास गया था कि इस शाही युद्ध का हमारे लिये दुःखान्त परिणाम होगा, तथापि मैंने आशा नहीं छोड़ी और निराश नहीं हुआ। मुझे अभी तक आशा थी कि मिलन से निराश हो इटली के सच्चे सेवक तथा देशभक्त वेनिस में एकत्रित होंगे और उसी को अपने सारे परिश्रम का केन्द्र मानेंगे, परन्तु खेद का विषय है कि यह आशा भी टूट गई। वेनिस के साथ जो सलूक बादशाह पेडमांट ने किया, उसे हम ऊपर वर्णन कर चुके हैं। बिचारा मामिन, जो वेनिस के बचाव में सबसे अधिक परिश्रम कर रहा था, शाह पेडमांट के छल के उपरान्त युद्ध करने का धैर्य्य न रख सका और शीघ्र ही आस्ट्रियन सेना पुनःशहर में घुस आई"। जब मेज़िनी ने देखा कि छल तथा कपट ने इस भांति उनकी सारी अशाओं पर पानी डाल दिया, तो वह फ्रांस के मार्ग से होता हुआ टसकनी में चला गया।

रोमन रिपबलिक

इस समय जबकि सारी इटली में मेज़िनी ने यह समां बांध रक्खा था और आस्ट्रियन जैसे कट्टर जाति वालों के

हृदय में एक प्रकार का भय संचार उत्पन्न कर रक्खा था, इस समय जब कि एक दीन पराधीन जाति के भाग्य का वारा न्यारा हुआ चाहता था, अथवा यह जाति अपनी काया पलट कर लेती और एक स्वतन्त्र स्वाधीन जाति कहलाने लगती, अथवा एक दूसरी जाति के अत्याचार का शिकार बनी रहती, जो कुछ होना होता वह तो अवश्य ही होता, क्योंकि यह काल सदा अपना स्वरूप परिवर्तन करता ही रहता है. इसी समय पोप अपनी प्रजा में स्वदेशानुराग' का उत्साह बढ़ता देख ऐसा भयभीत हो गया कि अरदली के भेष में रोम से भाग खड़ा हुआ। अब रोम को अधिकार था कि जिस प्रकार चाहे शासन प्रणाली स्थिर करे। फिर उधर बिना लड़ाई भिड़ाई के टसकनी का ग्रेन्ड ड्यूक भी राजपाट छोड़ भाग गया। मिलन की घटना देख कर यह अनुमान किया जाता था कि अब अधिराजिक प्रणाली का अन्त काल पहुंच गया है। अतएव मेज़िनीय ने यह विचारा कि यदि ऐसे उत्साह तथा उत्तेजना के सम रोम की पार्ल्यामेन्ट पञ्चायती राज्य स्थापित कर दे, तो सारा देश सामाजिक विषय में एक हो जायगा। परन्तु रोमन पार्ल्यामेन्ट में अभी इतना पुरुषार्थ कहां था? उनकी निद्रा ऐसी अचानक टूट गई थी कि वे भकुआ से हो गए थे। और एक पद भी आगे न रख सकते थे। वे बड़ी द्विविधा में पड़ गए। कदाचित् पोप के निकट दूत दौड़ाते और उससे पूछते कि क्या करें? कदाचित् सुलह की बात चीत करते। सारांश यह कि पार्ल्यामेन्ट के मारे घबड़ाहट के हाथ पैर फूल गए। उनकी अवस्था पर दु.ख भी होता था और हंसी भी आती थी। इसी हेतु मेज़िनी ने एक पत्र उनको लिखा कि "परमात्मा ने किसी जाति को इससे अधिक प्रत्यक्ष रीति पर कदापि नहीं बतलाया होगा कि तुम्हें उसी

एक परमात्मा परब्रह्म की ही पूजा करनी चाहिए। भाग्यवश हमको बादशाह ऐसे मिले हैं जो मूर्ख हैं और देश के अशुभ-चिन्तक हैं। पर तिसपर भी हम लोगों को दृढ़ विश्वास है कि देश का उद्धार बादशाह के पंजे से अवश्य ही होगा। पोप स्वयं भाग गया है, पर आप सब अब भी द्विविधा में हैं। हमें यह चिन्ता नहीं कि पञ्चायती राज्य स्थापित हो। हमारी इच्छा केवल यही है कि सारी इटली एक हो जाय और इसलिये मैं इस चिन्ता में हूं कि आप अब आगे क्या करते हैं। पोप का भाग जाना मानो राज पाट त्याग देना है। पोप तो सदा चुना जाता है। इसलिये उसे कोई पैतृक अधिकार नहीं। इसके भाग जाने से उस राजगद्दी का उसका कोई पुत्र पौत्रादि उत्तराधिकारी नहीं हो सकता। इस अवस्था में रोम की प्रजा स्वतन्त्रता पूर्वक अपने लिये शासनीय प्रणाली चुन सकती है। सारांश यह कि रोम में तो स्वयं कालगति से पञ्चायती राज्य स्थापित हो ही गया है। परन्तु जब शान्ति हो जाय तो देश के भिन्न भिन्न भागों से मेम्बर चुन कर बुलाए जांय और रोम शहर में यह नियमानुसार निर्णय हो जाय कि रोमन गवर्न्मेन्ट की शासन प्रणाली इस प्रकार की होगी"। निदान बड़े समझाने बुझाने के पश्चात् रोमन पार्ल्यामेन्ट ने अपनी अवस्था को भली भांति समझा और ९ फरवरी सन् १८४९ को रोम में पञ्चायती राज्य की सूचना दे दी गई। मेज़िनी को भी प्रजा होने का अधिकार दिया गया और वह शीघ्र ही मेम्बर पार्ल्यामेन्ट चुना गया और रोम की ओर चला। मार्ग में वह टसकनी में भी ठहरा। यहां ग्रेन्ड ड्यूक के भाग जाने से एक प्रोविजनल गवर्न्मेन्ट नियत हो चुकी थी। मेज़िनी को पूर्ण विश्वास था कि टसकनी निवासी स्वयं अपनी स्वतंत्रता स्थिर न रख

सकेंगे। अतएव उसने उन लोगों को यह समझाया कि वे भी पञ्चायती राज्य स्थापित करके रोम के साथ मिल जांय जिस में इटली को एक करने का काम अधिक सहज हो जाय।

सर्व साधारण मनुष्यों ने तो इस सम्मति को स्वीकार किया और पंचायती राज्य के लिये सम्मति दी, परन्तु प्रोविज नल गवर्न्मेंन्ट ने इस बात को स्वीकार नहीं किया। निदान मेज़िनी रोम चला गया। इस शहर की पवित्र भूमि में पहुंचने के समय जो जो भाव उसके चित्त में उठे थे, उन्हें वह यों वर्णन करता है—"बाल्यावस्था में भी मैं प्रायः रोम के विषय में विचारता रहता था। रोम हर एक समय मेरी दृष्टि के आगे घूमा करता था, यहां तक कि मुझे स्वप्न में भी रोम ही रोम दिखाई देता था। ज्यों ज्यों मुझमें ज्ञान का अधिक आवेश होता, मेरा स्नेह रोम में अधिक होता जाता था और मेरी आत्मा उसकी ओर खिंची जाती थी। एक दिन मार्च के महीने में सन्ध्या समय मैं रोम में पहुंचा। उस समय मेरे चित्त में ऐसे प्रेम तथा भय का संचार उत्पन्न हुआ जो भक्ति की हद् तक पहुंच गया था। यद्यपि रोम उस समय बड़ी दुर्गति को प्राप्त हो रहा था, परन्तु फिर भी वह मेरी दृष्टि में मनुष्य जाति के लिये पूज्य स्थान बनाने के योग्य था, और मुझे विश्वास था कि एक दिन रोम से धार्मिक उपदेश का प्रचार फिर आरम्भ होगा जो सारे योरप में तीसरी बेर सामाजिक एकता फैला देगा। लोम्बार्डी, के पराजय होने से आकुल हो, तथा टसकनी में नवीन चरित्र देख कर, मैं रोम में ऐसे समय पहुंचा था जब कि इटली के पञ्चायती राज्याभिलाषी जन तितिर बितिर हो गए थे। परन्तु जिस समय मैं उस दरवाजे पर पहुंचा जिसे प्रजा का दरवाजा कहते है, तो उस समय मेरे हृदय में एक प्रकार की आकर्षण शक्ति का सा संचार

उत्पन्न हुआ, जिससे मुझे ऐसा जान पड़ा मानो मुझ में एक नई जान आ गई है। कदाचित् मुझे अपने जीवन में फिर रोम के दर्शन न हों परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि मृत्यु समय जब मैं अपने उत्पन्न करने वाले परमात्मा और अपनी जन्म देनेवाली भूमि का ध्यान करूंगा, तो उसके साथ रोम का भी ध्यान अवश्य मेरे मन में आजायगा, और मेरी हड्डियां कहीं गाड़ दी जांय, परन्तु मुझे विश्वास है कि जब इटली के एक सम्मत होने पर पञ्चायती राज्य का झण्डा रोम के प्रतिष्ठित स्थानों पर गाड़ा जायगा, तो मेरी हड्डियों में से भी संतुष्टता की लहर निकल कर वहां पहुंच जायगी।" मेज़िनी का विचार यह था कि इटली की स्वतंत्र राजधानियों को यह परम आवश्यक है कि अस्ट्रिया के विरुद्ध युद्ध की तैयारी करें। लौम्बार्डी पर पुनः जय प्राप्त करने के पश्चात् यह अभीष्ट जान पड़ता था कि अस्ट्रिया रोम पर फिर आक्रमण करे। परन्तु मेज़िनी यह विचारता था कि "चाहे अस्ट्रिया रोम पर आक्रमण करे वा नहीं, पर हमें स्वयं उससे युद्ध करना अत्यावश्यक है; क्योंकि इटली में पञ्चायती राज्य की जड़ उसी समय दृढ़ होगी जब कि इटली को स्वाधीन करके यह दिखा दिया जायगा कि जिस काम के पूरा होने में अधिराजिक शासन इतनी कठिनाइयां खड़ा करता था, वह काम आज स्वयं पञ्चायती राज्य ने कर दिखाया"। यह सोच मेज़िनी ने पार्ल्यामेन्ट में यह प्रस्ताव किया कि एक 'जङ्गी कम्पनी' स्थापित की जाय जो डिफेन्स और युद्ध दोनों के हेतु यथोचित तैयारियां करे। इस कमेटी ने वालन्टियरों की सहायता की आशा पर जिनके विषय में मेज़िनी को विश्वास था कि वे इटली के हर एक भाग से एकत्रित हो जांयगे, इस सेना की संख्या को ५० हजार तक बढ़ा दिया। इस छोटे से पञ्चायती राज्य की ओर से ऐसी

उत्तेजना देख बादशाह चार्ल्स अलबर्ट ने भी अस्ट्रिया के विरुद्ध युद्ध की सूचना देदी। परन्तु बादशाही लड़ाइयां तो नवारा के मैदान में समाप्त हो गईं, क्योंकि वहां किसी छल से सारी शाही सेना शत्रु के वश में हो गई। सर्वसाधारण के क्रोध को दूर करने के अभिप्राय से बादशाह ने यह कलङ्क एक जेनरल के माथे मढ़ उसको गोली से मरवा डाला, यद्यपि स्वयं शाह के वजीर इस दुष्कर्म के कारण थे। निदान चार्ल्स ने राजगद्दी का परित्याग कर अपने पुत्र विकटर को राजतिलक देदिया। अस्ट्रियन सेना की इस जय का समाचार सुन पार्ल्यामेन्ट ने विचारा कि अब तो युद्ध होने में कोई सन्देह बाकी न रहा। इसलिये शीघ्र अपनी सभा में से तीन मेम्बरों को समस्त प्रबन्ध का अधिकार दे दिया। उनमें मेजिनी भी था। इन तीनों प्रधान पुरुषों में मेज़िनी मानो मुख्य आत्मा रूपी था। इन विचारों को अपनी सेना एकत्रित करने के लिये एक महीने का भी समय न मिला कि शाहनशाह फ्रांस लुइस नेपोलियन ने रोम के पञ्चायती राज्य को चकनाचूर करने के लिये फ़रासीसी सेना भेजी। जब यह सेना रोम के बन्दरगाह में पहुंच गई तो पञ्चायती सभा ने भी यह निश्चय कर लिया कि युद्ध करना उचित है। यद्यपि मेज़िनी के अतिरिक्त यह किसी मनुष्य को विश्वास न था कि रोम निवासियों में यह सामर्थ्य है कि फ्रांस जैसी बड़ी राजधानी का सामना कर सकें। मेज़िनी लिखता है कि "जब पञ्चायती राजसभा में इस विषय पर तर्क वितर्क होता था कि हमलोगों को युद्ध करना चाहिए अथवा आधीनता स्वीकार करनी चाहिए, तो नेशनेल गार्ड के सेनापतियों ने सपष्ट कह दिया कि प्रायः सिपाही इस सेना के युद्ध से मुंह फेरते हैं। इसपर मैंने आज्ञा दी कि सारी सेना कल प्रातःकाल महल के सामने पंक्ति में खड़ी की

जाय कि जिसमें उनसे पूछा जाय कि वे लड़ेंगे या नहीं। जिस समय इस सेना से युद्ध के हेतु शब्द आने लगा तो सेनापतियों की शङ्का तथा उनका डर भी दूर होगया।" इस युद्ध को मैं सविस्तर वर्णन नहीं किया चाहता। यद्यपि लूइस नेपोलियन स्वयं उस समय फ्रांस की पञ्चायती राज्य सभा के प्रेसिडेन्ट थे, पर इस युद्ध से उनका अभिप्राय यह था कि एक राष्ट्रीय राज्य के सिपाही को दूसरे स्वतन्त्रराज्य के विरुद्ध लड़ने का अभ्यस्त करे, कि जिसमें अपने देश में भी फिर से अधिराजिक शासन की जड जमने में कठिनाई न हो। फिर इस युद्ध से एक बडा भारी लाभ उसे यह हुआ कि सारे रोमनकेथोलिक पादडी उसके साथी और सहायक हो गए और पादडियों के कारण फ्रान्स का वह भाग भी उसके वश में आगया जो पहले पादडियों के पंजे में था। रोमका दृश्य देख योरप की दूसरी राजधानियां यह विचार कर कि हमारी प्रजा भी कहीं यही रङ्ग न पकड़े, ऐसी भयभीत हुईं कि उन सबने इस युद्ध में किसी ओर कुछ पक्ष न लिया, वरञ्च शान्त होकर तमाशा देखती रहीं। इस कारण फ्रांस के दुष्टात्मा तथा अत्याचारी प्रेसिडेन्ट को यह अवकाश मिला कि वह एक असंख्य रोमन प्रजा का प्राणवध करके फिर से पोप को राजगद्दी पर बैठा दे। रोमनिवासियों ने इस युद्ध में अपनी वीरता का भली भांति परिचय दे दिया और वीरता का उत्तर वीरता से ही दिया। दो महीने तक निरन्तर युद्ध होता रहा, पर अन्त में एक असंख्य तथा शिक्षित सेना के सन्मुख ये विचारे कहां तक ठहर सकते थे। दो महीने के युद्ध के पश्चात् फरासीसी सेना शहर के निकटस्थ पहाड़ियों तथा दूसरे टीलों पर चढ आई और वहां से गोलों की मानो वर्षा करने लगी। निदान पर्ल्यामेन्ट ने यह निश्चय किया कि अब युद्ध का

जारी रखना सर्वथा वृथा है। गवर्न्मेन्ट को चाहिए कि फरा-
सीसी जेनरल से मेल के लिये बात चीत करे। पर मेज़िनी
ने यह कहा कि मुझे रिपबलिक राज्य की रक्षा के हेतु चुना
था, न कि उसके विनाश के लिये। यह कह कर उसने शीघ्रही
उस सभा से अलग होने की इच्छा प्रगट की। उसके दोनों
दूसरे साथियों ने भी ऐसा ही किया। अगले दिन उसने एक
प्रोटेस्ट लिख लिया, जिसमें लिखा था कि यद्यपि सर्वसाधारण
निराश नहीं हुए, पर पार्ल्यामेन्ट के छक्के छूट गए। उसने
पार्ल्यामेन्ट को लिखा कि "आपको प्रजा ने इस अभिप्राय से
नियत किया है कि जब तक प्राण रहे आप पीठ न दिखावें
और उस सिद्धान्त पर स्थिर रहें जिसपर यह सभा स्थापित
है, जिससे संसार को इस बात का प्रमाण मिले कि न्याय तथा
अन्याय में कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता, सत्य तथा असत्य का
कदापि जोड़ नहीं हो सकता, न्यायशील तथा पशुवत् बल में
कदापि मिलाप नहीं हो सकता। आधिराजिक शासन, जो
स्वार्थ साधन सिद्धान्त पर बना है, सुलह और मेल का अभि-
लाषी हो, परन्तु पञ्चायती राज्य, जो कि प्रजा के उत्साह
पर स्थिर है, कदापि सुलह के लिये प्रार्थना नहीं कर सकता
वरन लड़ते लड़ते अपना प्राण दे देता है।" उसने यह भी
लिखा कि "लोग लड़ने के लिये अभी तक तैयार थे परन्तु
पार्ल्यामेन्ट ने 'डिफेन्स (रक्षा), को असम्भव मान कर अब
इसको अवश्य असम्भव कर दिया है। फ़रासीसी सेना का
रोम में आजाना ही मानो पञ्चायती राज्य का प्राणान्त होना
है। ऐसे नाज़ुक समय में, जबकि तुमको अपने प्रालब्ध से युद्ध
करके अपना पुरुषार्थ दिखाना उचित था, तुमने अपनी काय-
रता से अपने ऊपर तथा रोम पर धब्बा लगा दिया। मैं
अपनी ओर से परमेश्वर तथा सर्वसाधारण के नाम पर ऐसी

कायर कार्रवाई पर क्रोध प्रगट करता हूं । तुमको परमेश्वर के निकट तथा अपनी जाति के समीप इस अधम कार्य के बुरे परिणाम का उत्तर देना पड़ेगा'' मेजिनी अपनी जान से ऐसे निर्भय था कि शहर में फ़रासीसी सेना की उपस्थिति में एक सप्ताह पर्य्यन्त वह अपने दो मित्रों सहित घूमता रहा और वैर तथा विरोध फैलाने की चेष्टा में प्रवृत्त रहा । मेज़िनी को विशेष क्रोध इस कारण था कि एक पञ्चायती राज्य दूसरे पञ्चायती राज्य का इस अनुचित अत्याचारी वर्ताव से गला घोटने में कटिवद्ध हो रहा है और वह चाहता था कि जिस भांति से होसके फ़ारसीसी सेना को देश से भगा दे । परन्तु कोई यत्न फलदायक न हुआ । वह अपनी जानपर खेल कर अवलों रोम में वास करता रहा, जहां चारो ओर उसे पकड़ जाने का भय था । परन्तु वह यह सिद्ध करके दिखाया चाहता था कि मुहासिरे के दिनों में फ्रेंच केथोलिक पत्रों ने जो मिथ्या कलङ्क उसपर आरोपण किया था, वह सर्वथा झूटा था । ऐसा साव-काश पाने पर भी सारे रोम में एक मनुष्य ऐसा न निकला जो उसके प्राण का ग्राहक हो, अथवा बदला लेने की इच्छा रखता हो, यहां तक कि फ्रेंच सेनापति से पुरष्कार पाने के लोभ पर भी कोई उसे पकड़ कर शत्रु के निकट न ले गया । मेज़िनी लिखता है कि "मेरी आत्मा आज्ञा नहीं देती थी कि मैं रोम से वाहर चला जाऊं : रोम का चित्र किसी प्रेयसी प्रिया के समान मेरे हृदय में बना रहता था, और रोम का नाश मेरी दृष्टि में उसी प्रिया की मृत्यु के समान देख पड़ता था । मुझे भास गया था कि पार्ल्यामेन्ट के मेम्बर तथा गवर्न्मेंन्ट के वज़ीर और दूसरे प्रधान कर्मचारियों को देश परित्याग का दण्ड दिया जायगा, उन अस्पतालों को नष्ट कर दिया जायगा जहां हमारी सेना के घायल तथा रोगी

मनुष्य गिनती के दिन पूरे कर रहे हैं। सबसे अधिक आश्चर्य मुझे इस बात का है कि ऐसा अवकाश पाने पर भी मुझे न तो फ्रेंच सेना में से किसी ने पकड़ने की युक्ति की और न पादड़ियों में से किसी ने चेष्टा की। मुझे अबलों स्मरण है कि किस सच्चे प्रेम से मेरे मित्र मुझसे प्रार्थना करते थे कि मैं रोम से बाहर चला जाऊं, कि जिसमें किसी अच्छे अवसर पर किसी शुभ काम के अर्थ आसकूं। परन्तु मुझे यदि यह ज्ञात होता कि मेरे वही मित्र मुझे धोखा देंगे तथा मेरा साथ छोड देंगे, जैसा कि भविष्यत् में उन्होंने किया, तो मैं उनसे यही कहता कि यदि तुमको मुझसे प्रेम है तो मुझे रोम के साथ मरने दो"। मेज़िनी बड़े अभिमान से लिखता कि "इस दो महीने के युद्ध में रोम ने वह काम करके आदर्श खड़ा कर दिया जो कि चिरस्मरणीय रहेगा। इस युद्ध ने यह सिद्ध कर दिया कि थोडे मनुष्यों की एकता, प्रीति तथा प्रतिज्ञा की दृढता से किसी एक सिद्धान्त के हेतु कैसे कैसे साहस के काम हो सकते हैं और अपने उच्च सिद्धान्त की शिखर पर खड़े हो अपने उस सिद्धान्त के हेतु मरते मारते, तथा कैसे कैसे आश्चर्य जनक कार्य मनुष्य कर डालते हैं"।

मेज़िनी वर्णन करता है कि इसी भांति मनुष्यों ने ठीक भय के समय अपनी दृढ़ता से कैसे कैसे आश्चर्यजनक कार्य कर डाले हैं। जातीय पार्ल्यामेन्ट और उन तीनों प्रबन्धकारी मनुष्यों ने ऐसी एक सम्मति से काम किया कि मानो सब एक जान थे। हर एक को परस्पर विश्वास था लोग पञ्चायती राज्य से अति प्रसन्न थे। हर एक कार्यवाहक कर्मचारी अपने कर्तव्यों को भली भांति जानता था, अपने जातीय अधिकारों के पाने के लिये जान देने पर तैयार था, जाति को अपने नायकों, तथा नायकों को अपनी जाति पर पूरा

भरोसा था। इस दो महीने के ऐसे उत्साह पूर्ण कामों के सामने उस अधिराजिक शासन के समस्त कार्य तुच्छ समझने चाहिएं। रोम निवासी न मालुम किस प्रकार सन् ४६ के कार्यनामों को स्मरण करते हैं। पर मेरी सम्मति में तो रोम की माताओं को उचित है कि अपने बच्चों को उन शहीदों के नाम याद करादें और उनके कोमल हृदय में उनका गौरव स्थिर करादें, जो अपने राज्य के लिये सन् ४९ में रोम में बलिदान हुए थे। उनको उचित है कि अपने बच्चों को उन पवित्र स्थानों की यात्रा करा दें जहां कि स्वजातीय युवक कवि मेमिलि लड़ता हुआ मारा गया, जाति के होनहार युवकों को वह भूमि दिखादें जहां कि घायल मेसिना ने केवल १६ साथियों के साथ आगे बढ़कर ऐसे स्थान पर धावा किया था जहां ३०० फ्रेंच पहरा दे रहे थे और यद्यपि वे सब खेत रहे पर पीठ न दिखाई, उनको उस स्थान पर ले जावें जहां वीर डूविरिओ तथा रामारिनो अपनी जाति को स्वाधीन करने के लिये बलिदान हुए थे, यद्यपि सौ मनुष्यों के सन्मुख केवल २० मनुष्य रह गए थे, पर मैदान से लौट कर जाने को नीच कर्म जानते थे, इस लिये वहीं लड़कर उन्होंने प्राण दे दिया। कहां तक मे इसे गिनाऊं। रोम के चारों ओर जो पत्थर पड़े हैं, वे स ः रोम वालों के लिये पवित्र हैं, क्यों कि उन पर उन शूरवीर पुरुषों के रक्त गिरे हैं। यदि रोम भर की माताएं इसी प्रकार अपने कर्तव्य के करने में कटिबद्ध रहेंगी, तो मुझे पूर्ण आशा है कि रोम से अधिराजिक शासन थोडे ही दिनों में नष्ट हो जायगा और पञ्चायती राज्य का पताका शीघ्र ही फहराता देख पड़ेगा"। निदान मेज़िनी विना पास लिये छोटे से जहाज़ पर सवार हो मार्सेल्स में जा पहुंचा। मालिक जहाज़ ने भी अपनी जान पर खेल कर उसको बचाया।

मेज़िनी छिपे छिपे नगर में प्रविष्ट हुआ और वहां से उसी रीति से यात्रा करता हुआ फ्रांस को तै करके स्वीज़रलैन्ड में जाकर उसने शरण ली। पर रोम से जाने के पहिले वह एक ऐसे गुप्त सोसाइटी की नेव डालता गया, जो कि रोमवालों तथा इटली के जातीय दल से पत्र व्यवहार जारी रक्खे। एक इतिहास-लेखक लिखता है कि इस सभा का मुख्य कर्ता धर्ता एक पिट्रोनी नामक मनुष्य था, जो प्लेवना का रहने वाला था। इस विचित्र पुरुष को २० वर्ष तक एक अन्धेरे गुफ़ा में बन्द करके रखा गया पर इसके सिद्धान्तों में कोई विभेद न पड़ा और वह अपनी प्रतिज्ञा में वैसा ही दृढ रहा। ज्यों ही वह बन्दीगृह से छूटा, वह मेज़िनी का साथी हो एक पंचायती राज्य-हितकारी पत्र का सम्पादक हो गया। इस सभा ने कई वर्ष तक जातीय उत्साह स्थिर रक्खा। पर अन्त में जब उसके कर्ता धर्ता पकड़े गए, तथा उनका छापाख़ाना भी पकड़ा गया, तो मेज़िनी को उसके साथ पत्र व्यवहार जारी रखने की कोई युक्ति न रही। उसके नाम में जो एक विचित्र शक्ति थी वह भी जाती रही और लोगों तक उसके शब्द का भी पहुंचना दुःसाध्य हो गया। शाह पेडमान्ट ने स्थान स्थान पर अपने दूत भेज लोगों को पंचायती राज्य की ओर से घृणा उत्पन्न कराना आरम्भ कर दिया और प्रत्येक प्रकार की सहायता करने की प्रतिज्ञा की। परन्तु यह बात सिद्ध है कि जहां किसी जाति को कुछ काल दास भाव में रहना अभ्यस्त हो जाता है, यद्यपि उस जाति ने यह दास भाव किसी नीति से क्यों न स्वीकार किया हो, पर वह जाति फिर सिर उभाडने के योग्य नहीं रहती और तब उस जाति को दास भाव में रखने के लिये भी कुछ विशेष परिश्रम नहीं करना पड़ता। इसी नियमानुसार रोम वालों में भी आलस्य तथा

कायरता आगई। मेज़िनी ने, जिसका मन्तव्य यह था, कि जो जाति स्वाधीन होना चाहती है उसको मरने मारने पर प्रस्तुत रहना अत्यावश्यक है, इस अवस्था को देख अपना ध्यान दूसरे ओर लगाना चाहा। सन् १८५२ अभी समाप्त भी होने नहीं पाया था कि उसके परिश्रमों का फल दिखाई देने लगा। लोम्बार्डी के उस भाग में जो वेनिस राजधानी के आधीन था, राजकीय विद्रोह फैला और फिर लोगों ने बलवा कर डाला। यद्यपि इस बलवे का फल शत्रुओं ने पूर्णतया भुगता और बलवे के तीन लीडर मार डाले गए, परन्तु शीघ्र ही मिलन में भी एक बलवा खड़ा हो गया, जो कि कारीगरों के बड़े परिश्रम का फल था। मेज़िनी ने एक जंगी पुरुष को भेजा कि वह जाकर उनके सब कामों को देखे और यह विचारे कि सफलता की कोई आशा हो सकती है कि नहीं। इस जंगी पुरुष ने देख भाल के रिपोर्ट दी कि सब काम बड़ी युक्ति से किए गए हैं और इस सावधानी से इस भेदको गुप्त रक्खा है कि सफलता की पूर्ण आशा होती है। मेज़िनी ने द्रव्य से उनकी सहायता की, पर इस संशय पर कि कहीं वे पकड़ न लिये जांय, शस्त्र भेजना स्वीकार नहीं किया। मेज़िनी ने उन लोगों को लिख भेजा कि "जो लोग मरने मारने पर कमर बांधते हैं वे शत्रुओं का शस्त्र छीनकर उनसे काम लेते हैं, जैसा कि सन् ४८ में हुआ था।" लोगों ने इस उपदेश को परमेश्वरी जाना और लड़ने पर तैयार हो गए। सारी तैयारियां बड़ी युक्ति से छिपे छिपे की गईं। मिलन के हर एक भाग में मनुष्य तथा सर्दार नियत कर दिए गए, जिनके लिये कोई स्थान विशेष नियत कर दिया गया, और सबको कह दिया गया कि प्रत्येक सर्दार अपने नियत समय पर एक दम बिगड़ खड़े हों। यह प्रबन्ध यहां लों किया गया

था कि ज्यों ही मिलन के उपद्रव का समाचार मिले उसी क्षण लोम्बार्डी में भी वहां की नेशनल पार्टी स्वतंत्रता के लिये झंडा खड़ा करदे। पर खेद का विषय है कि एकही मूर्खता तथा एक ही मनुष्य के छल ने सब कार्य नष्ट कर दिया, अर्थात् एक मनुष्य पर भरोसा करके उससे यह कहा गया था कि अमुक स्थान पर आक्रमण उस समय आरम्भ हो जब कि पहिले लीडर की ओर से सिगनल दिया जाय। इस दुष्ट लीडर ने छल किया और ठीक समय पर वह मिलन से भाग निकला। जो लोग नियत स्थान पर एकत्रित हुए थे और बाट जोह रहे थे, कुछ कालोपरान्त वे यह विचार कर कि या तो पार्टी के सर्दारों ने अपनी राय बदल दी है, या इस कार्य का अनुसंधान राजकीय कर्मचारियों को लग गया है, तितर बितर हो गए। उनमें से दो दलों ने इस सावधानी तथा सफलता से दो स्थान पर धावा किया कि आस्ट्रियन सेना में से डेढ सौ सिपाही और दो सेनापति मारे गए। पर अन्त में आस्ट्रियन गवर्न्मेंन्ट ने बिना कुछ सुने १३ मिलन निवासियों को फांसी दे दी। इस अवसर पर मेज़िनी ने बड़ी शीघ्रता से सारे लोम्बार्डी में यह समाचार फैला दिया और इस प्रकार से सब मनुष्यों को भाग जाने का अवकाश मिल गया।

पर वास्तव में मेज़िनी की निरन्तर शिक्षा से इटली निवासी अन्य जाति की पराधीनता से ऐसे आकुल हो गए थे कि इस परिश्रम के वृथा जाने से उन्हें कुछ खेद न हुआ, यद्यपि उनके बहुत से देशहितैषी फांसी पड़े तथा पकड़े गए। अभी सन् १८५४ की समाप्ति न होने पाई थी कि पुनः लड़ाई की तैयारियां होने लगीं। पर फिर उनका परिश्रम निष्फल हुआ। एक ओर तो फ्रेंञ्च और अंगरेज़ी गवर्न्मेंएट ने अपने जंगी

जहाज़ नेपल्स की गवर्न्मेंन्ट की सहायता के हेतु भेजे, उधर शाह पेडमान्ट के कई एक भेदिये इनके साथ आ मिले और ठीक समय पर उन्होंने सारा भेद प्रगट कर दिया। शाह पेडमान्ट को मेज़िनी से वड़ा वैर था और वह सदा इस यत्न में रहता था कि किसी प्रकार से उसे कष्ट पहुंचावे, जिसका मुख्य कारण यह था कि मेज़िनी सदा पेडमान्ट के मनुष्यों को शिक्षा देता रहता था कि वे तो अन्य जाति के शासन से रहित हो गए हैं और अपने स्वजातीय राज्य में हैं; पर उनको स्वयं स्वतंत्र होने के पश्चात् उचित है कि वे अपने पड़ोसी भाई वन्धुओं की यथोचित सहायता करें और उन्हें अपने समान स्वाधीन कर दें। उन्हें अपनी स्वतन्त्रता पर प्रसन्न हो अपनी जन्मभूमि के दूसरे प्रान्तों को दासभाव में कदापि न रहने देना चाहिए। परन्तु सामाजिक रीति व्यवहार के अनुसार एक वादशाह सदा दूसरे वादशाह की सहायता करता है, और यदि दो राजधानियों में कुछ नानेदारी का सम्बन्ध हो, अथवा एक राजधानी को यह भय हो कि ऐसे भाव के प्रचार से स्वयं उसके राज्य के आशङ्का में पड़ने की सम्भावना है, तो ऐसी अवस्था में वह राजधानी अवश्य अपनी पड़ोसी राजधानी की सहायता करेगी, क्योंकि यह भय झूठा नहीं, वरन् यथार्थ है कि एक खर्वूज़ा दूसरे खर्वूज़े को देखकर रंग पकड़ता है। इसी कारण मेज़िनी को सदैव पकड़ जाने का भय वना रहता था। दूसरे उसे यह भी भय रहता था कि कहीं उसके लेख न पकड जांय। तीसरे पेडमान्ट में प्रेस की स्वतन्त्रता छीन ली गई थी। चौथे वादशाह ने रुपया दे दे कर ऐसे उपदेशक या लेकचरर नियत कर रक्खे थे जो लोगों को भिन्न भिन्न रीति से स्वार्थपरता तथा स्वय सुख भोगने की शिक्षा देते फिरते थे। प्रेस की स्वतंत्रता का अनुमान इसी

से भली भांति हो सकता है कि आठ महीने के काल में स्व-जातीय पार्टी का एक समाचार पत्र पचास बेर गवर्न्मेंन्ट आज्ञा से रोक दिया गया और इसीकाल में उसके चार एडिटर क़ैद किए गये। पर इन सब कठिनाइयों तथा रुकावटों के होने पर भी मेज़िनी तथा उसके दल वाले कदाचित् एक क्षण के लिये भी निराश न हुए और अपने अभिप्राय में दृढचित्त उद्यत रहे। मेज़िनी ने अपने इन मानसिक भावों के प्रचार के हेतु एक समाचार पत्र जारी किया, जो कि पहिले तो लण्डन से और फिर स्वीज़रलैण्डसे प्रकाशित होता था। इस शिक्षा का फल यह हुआ कि सन् १८५७ में उसके मित्र कार लुपसाकिन ने नेपल्स पर आक्रमण किया और ठीक इसी समय जेनेवा और लेगहार्न में भी उपद्रव उठ खडा हुआ। पिसाकिन ने एक स्टीमर केगल्यारी नामक को पकड कर पोनज टापू से राजविद्रोही कैदियों को छोड़ दिया और उन्हीं सबको साथ ले वह नेप्लस के किनारे पर आ उतरा। उधर जेनेवा और लेगहार्न की नेशनल पार्टी ने शाही शस्त्रगृहों को अपने हस्तगत कर लेने की चेष्टा की। बिचारा पिसाकिन इस युद्ध में मारा गया और उसके मित्र, जो जीते थे पकड़े गए और एक अन्धेरे बन्दीगृह में डाल दिए गए, जहां उन पर बड़ी यंत्रणा की गई। जेनेवा में शाह पेडमान्ट ने उपद्रव को शान्त कर दिया और लेगहार्न मे आस्ट्रिया के ग्रैन्डडयूक ने जातीय पार्टी को नष्ट कर दिया। इस बेर की निष्फलता से मेज़िनी के स्वदेशीय शत्रुओं को उसके ऊपर भिन्न भिन्न प्रकार के झूठे झूठे दोषों के आरोपण करने का अवकाश मिला। किसी ने तो यह लिखा कि शाह पेडमान्ट के राज्य को मिट्टी में मिलाने के अभिप्राय से ये सब प्रबन्ध किए गए थे और किसी ने और नीच रीति से उसे निन्दित करने का बीड़ा उठाया। पेडमान्ट

के समाचार पत्र इस बात पर खेद प्रगट करते थे कि लोग क्यों मेज़िनी पर इतने मोहित हो रहे हैं, कि झूठ मूठ उसके मिथ्या विचार के अनुगामी हो अपने प्राण नष्ट करते हैं। वे लोगों को यह उपदेश देते थे कि जिस प्रकार पेडमान्ट में गवर्न्मैन्ट ने अपनी प्रजा को अधिकार दे रक्खा है, इसी प्रकार देश के दूसरे प्रान्तों में भी वही अधिकार दिए जा सकते हैं, यदि शान्त भाव तथा सावधानी से काम लिया जाय। मेज़िनी ऐसे उपदेशकों के अत्यन्त विरुद्ध था, क्योंकि वह इसे भली भांति जानता था कि यह केवल छल तथा धोखा देना है। उनका मुख्य अभिप्राय यह था कि लोगों में उत्साह न रहे, कम हो जाय और फिर जाति उत्साह रहित होने पर कदाचित स्वतंत्रता प्राप्त करने में योग्य न हो सकें। स्वयं मेज़िनी पर जो कलङ्क लगाए जाते थे, उनका उत्तर वह यह देता था कि "यदि मैं तुम्हारी बात पर विश्वास करता तो कभी का गुम हो गया होता। तुम्हारे विचार से मैंने २२ वर्ष पर्य्यन्त इटली को धोखे में डाल कर उनकी स्वतंत्रता को शङ्का में डाल रक्खा है और बराबर भूल कर रहा हूं। प्रायः तुमने लोगों पर यह विदित करने की चेष्टा की कि बस अब मेरा अन्तकाल आ गया और मुझमें दम नहीं रहा, और अब मेरा नाम भी किसी को उच्चारण न करना चाहिए। तुमने योरप की सारी राजधानियों तथा पुलिस भेदियों को मेरे पीछे लगा दिया, यहां तक कि सारे योरप में एक हथेली भूमि ऐसी न थी जहां मैं निर्भीत तथा नि शङ्क चित्त से दिन व्यतीत कर सकूं। फिर यद्यपि मैं वृद्ध और निर्धन हूं परन्तु समय समय पर युद्ध के मैदान में आता रहा हूं और हजारों आदमी मेरे अनुगामी हो गए हैं, यहां तक कि बहुत सी राजधानियां जिनके पास बड़ा धन तथा बड़ी सेना है, मेरे नाम मात्र से

डरने लगीं। यदि तुम पूछो कि इसमें क्या भेद है तो मेरा उत्तर यह है कि अनाथ इटली की विपद तथा उसकी दुःखमय अवस्था के विषय में मेरा अकेला शब्द क्या कह सकता है, सारी इटली एक सम्मत हो कह रही है। वहाँ के योग्य सज्जन पुरुष यही उपदेश दे रहे हैं कि युद्ध के अतिरिक्त कोई दूसरा उपाय नहीं। नेपल्स के समाचार पत्र तथा मनुष्य अवाक कर दिए गए हैं। उन्हें आज्ञा नहीं कि कोई बात इस विषय की लिख सकें। पर वे सब भी यही सम्मति देते हैं। तुम्हारे धोखे से भरे उपदेश, जो तुम लोगों को देते हो, मुझको युद्ध पर प्रस्तुत करते हैं, क्योंकि ऐसे ही उपदेशों ने सन् ४८ की उस विजय को पराजय में परिवर्तित कर दिया था। जब लों तुम कायरता का पाठ पढ़ते रहोगे और लोगों को सुख संभोगादि में पड़े रहने की सम्मति दोगे, और उन्हें यह उपदेश दोगे कि अपनी सहायता स्वयं करने के अतिरिक्त दूसरों की सहायता के भरोसे बैठे रहें, तबलों मुझे आवश्यकीय तथा बाध्य है कि मैं भी मैदान से न हटूं और अपने इस सत्कर्म में अधिकतर सयत्न रहूं। यदि तुम यह चाहते हो कि मेरा मान्य तथा यश नष्ट हो जाय, तो तुम्हें चाहिए कि सत्कर्म करो और अपने शुद्ध मानसिक भाव तथा सत्कर्म के उदाहरण से यह सिद्ध कर दिखाओ कि तुम उनके सच्चे शुभचिन्तक तथा उन्नत्याभिलाषी हो। आओ, यदि मैं अकेला हू तो तुम मेरी सहायता करो। एक सम्मत हो उनकी जातीय उन्नति का बेड़ा पार करो। पेडमान्ट में इतना कोलाहल मचा दो कि उसकी गवर्न्मेंन्ट अपना कर्तव्य पूरा करने पर आरूढ़ हो जाय। दक्षिण उत्तर तथा मध्यप्रदेश में तुम्हारे भाई, जो स्वाधीनता तथा स्वतन्त्रता के हेतु लड़ रहे हैं, उनकी शस्त्र तथा द्रव्य से सहायता करो"। इसके उत्तर में शाह पेडमान्ट ने यह आज्ञा दी कि

जिस ठौर और जिस समय मेज़िनी मिले, वहीं मार दिया जाय और क्युर ने पार्ल्यामेन्ट में यह वर्णन किया कि पेडमान्ट के लिये यह आवश्यकीय है कि वह अपने राजकीय प्रतिज्ञाओं पर, जो उसने दूसरे राज्यों के साथ की है, स्थिर रहे। क्युर शाह पेडमान्ट का प्रधान मन्त्री था। वह उन पांच पुरुषों में से एक था जिनको इटली की स्वतन्त्रता का कारण कहते हैं। मेजिनी और क्युर के मानसिक भाव में बड़ा विभेद था और क्युर मेज़िनी का पूरा शत्रु था। पर इस वात का निर्णय इतिहास लेखक भी न कर सके कि क्युर की कार्रवाई शुद्ध चित्तवृत्ति पर निर्भर थी, अथवा इसके अतिरिक्त दुष्टता पर। कुछ लोगों की यह सम्मति है कि वह वडा भारी राजनीतिज्ञ था। प्रत्यक्ष में मेज़िनो और जेरीवाल्डी से विगाड़ रखता था, कि जिसमें वादशाह से वनाए रक्खे और दूसरी राजधानियों की सहायता से इटली को स्वतन्त्र करादे और लड़ाई के अतिरिक्त धूर्तता से काम लिया चाहता था। उधर मेजिनी के अनुगामी प्रशसक यह कहते हैं कि क्युर वड़ा स्वार्थी था। अपनी श्रेष्टना अधिकतर चाहता था और इटली की पर्वाह भी नही रखता था। ऐसा लोग कहते हैं कि क्युर ने वहुत वेर पब्लिक में यह कहा कि इटली की एकता तथा स्वतन्त्रता केवल एक भ्रम है, जिसका पूरा होना कदापि सम्भव नहीं।

इस उपद्रव के शान्त होने पर क्यूर मेज़िनी के साथ एक चाल चला। वह यह थी कि लोगों के हृदय से मेज़िनी का यश घटाने के लिये उसने एक सोसाइटी संयुक्त की जिसका नाम नशनेल सोसाइटी रक्खा। उसका मुख्य कर्तव्य यह नियत किया कि आस्ट्रिया के साथ युद्ध करने की तैयारी करना, जिसका परिणाम यह हुआ कि लोग उमड़ उमड़ कर

क्युर के अनुगामी बनने लगे और ज्यों ही यह समाचार फैला कि फ्रांस भी सहायता करने को तैयार है, फिर तो मेज़िनी के पार्टी वाले भी आ शाही झण्डे की शरण लेने लगे और देश के प्रत्येक भाग से बहुत मनुष्य शाह की सहायता के लिये आने लगे। इस रचना से दो अभिप्राय थे। प्रथम तो उनकी यह इच्छा थी कि किसी भांति मेज़िनी को नीचा दिखावें, क्योंकि उनको सदा यह भय लगा रहता था कि यदि उसकी मान मर्य्यादा इसी प्रकार बनी रही, तो एक न एक समय पेडमान्ट राजधानी मिट्टी में मिल जायगी, और लोग शासन प्रणाली अपने हाथ में ले लेंगे। दूसरा अभिप्राय उनका यह था कि लोम्बार्डी का सूबा पेडमान्ट राजधानी के हस्तागत हो जाय। उधर फरासीसी असंख्य सेना लड़ाई के लिये व्यग्र हो रही थी और वहां की प्रजा भी उनसे अप्रसन्न थी। शाह फ्रांस ने यह सावकाश पा क्युर के साथ प्रतिज्ञा की कि फ्रांस आस्ट्रिया के विरुद्ध युद्ध करने को प्रस्तुत है और इस सहायता के प्रतिकार में इटली के दो सूबे (मेनज़ा और सेवाई) फ्रेंच राज्य में मिला लिए जांयगे। एक इतिहास-लेखक यों लिखता है कि "यह कार्रवाई एक उस घर वाले के सदृश है कि जो किसी डांकू की सहायता से एक चोर को अपने घर से निकाल दे पर इसके प्रतिकार में उस घर के अगले पिछले भाग की तालियां उस डांकू को सौंप दे"। मेज़िनी इन सब चालों से विज्ञ था और उसने ६ महीने पहिले ही लोगों को इस प्रतिज्ञापत्र की सूचना दे दी थी। वह पुकार कर कहता था कि नेपोलियन की हार्दिक इच्छा यह है कि मेनज़ा और सेवाई फ्रांस के हत्थे चढ़े और उस राज्य में मिला लिया जाय और नेपल्स का राज्य मुरट को प्राप्त हो और इटली का मध्यप्रदेश उसके भाई को मिले। क्युर ने इन सब बातों को स्वीकार कर लिया

है। यदि आस्ट्रिया ने अन्त समय तक युद्ध किया तो सब प्रतिज्ञाएं पूरी हो जांयगी और यदि थोड़े युद्ध के पश्चात् वेनिस को अपने अधिकार में रखने के अभिप्राय से लोम्बार्डी को छोड़ दिया तो लड़ाई शीघ्र ही समाप्त हो जायगी। लोम्बार्डी शाह पेडमान्ट के हाथ आ जायगा, और जिन लोगों ने इटली के भिन्न भिन्न प्रान्तों में युद्ध का झण्डा खड़ा किया है, उनकी पूरी दुर्दशा करके वे छोड़ दिये जांयगे, और अपने अपने बादशाह से यथोचित दण्ड पाएंगे। पर लोगों ने मेजिनी की एक न सुनी और ऐसे धोखे में आगए कि स्वतंत्रता के हेतु बादशाह की सूचना पर विश्वास करने लगे। ज्यों ही बादशाह ने यह बात प्रकाशित की कि इटली आल्प्स् पर्वत से समुद्र तक स्वतंत्र कर दी जायगी, इटली निवासी उन्मत्त हो बादशाह के पीछे लग गए, नेशनल पार्टी के बुद्धिमान लीडर के वाक्य की कुछ परवाह न की। बहुत से मनुष्य बादशाह की ओर वालन्टियर होगए यद्यपि शाही प्रेस बराबर लिखता रहा कि बादशाह को वालन्टियर सेना की आवश्यकता नहीं क्योंकि शाही सेना इटली को स्वतंत्र करने के लिये प्रयोजन से भी अधिक है; इस लिखने पर भी वालन्टियर सेना की संख्या दस हज़ार तक पहुंच गई, जिनमें से केवल चार हज़ार चुन लिये गए और जेरिवाल्डी उनका सेनापति नियुक्त कर दिया गया, और बाकी सब लौटा दिए गए। इस युद्ध का मेज़िनी के जीवन चरित से कुछ सम्बन्ध नहीं। परन्तु इतना कह देना हम आवश्यक समझते हैं कि मेज़िनी की भविष्यत् वाणी इस युद्ध के परिणाम विषयक बिलकुल सत्य हुई। शाहन्शाह फ्रांस तथा शाह पेडमान्ट की मिली हुई सेना के अभिमुख आस्ट्रिया की सेना न ठहर सकी, और जब आस्ट्रिया बहुत आकुल हो गया तो शीघ्र ही शाह

फ्रांस ने आस्ट्रिया से मेल कर लिया। जिस समय इटली को अपने सब परिश्रम का फल मिलने लगा, उसी समय फ्रांस ने आस्ट्रिया से मेल करके उसकी स्वतंत्रता को मिट्टी में मिला दिया, और इटली के भिन्न भिन्न प्रान्तों को यों विभाजित करके बांट लिया कि वेनिस आस्ट्रिया के पास रहा; लोम्बार्डी शाह पेडमान्ट को मिला; मोरडिना और टसकनी के ड्यूक अपने अपने अधिकार पर ज्यों के त्यों बने रहे, रूलोना पुनः पोप को दे दिया गया। इन सब राजधानियों पर पोप नृपति माना गया, अर्थात् सब विभाग की राजधानियां पोप के आधीन पुनः कर दी गईं।

शाहन्शाह फ्रांस और आस्ट्रिया के बीच यह सन्धिपत्र लिखागया.जिसमें शाह पेडमान्ट का कहीं नाम भी नहीं रक्खा गया था। रूलोना और टसकनी की प्रजाने इस सन्धि पत्र को मानना अस्वीकार किया, और इस कार्यवाही से क्रुध हो मध्यप्रदेश को अलग कर देना विचारा गया। लोगों का फिर मेजिनी की ओर ध्यान गया। पर उसने यही सम्मति दी कि रूलोना तथा टसकनो को शाह पेडमान्ट के साथ रहना चाहिए, एक ओर तो पञ्चायती राज्य वाले उसको बुरा भला कहने लगे कि मेजिनी ने अपने सिद्धान्त को छोड दिया और अधि-राजिक शासन की शिक्षा देने लगा। दूसरी ओर शाही समाचार पत्र इन सारे उपद्रवों का कारण मेजिनी को कहने लगे, पर धन्य है इसकी सहनशीलता, कि मेजिनी किञ्चतमात्र भी न घबडाया, और बराबर यही कहता रहा कि भावी सबसे प्रबल है, और फिर भी इसी यत्न में रहा कि सारी जाति तथा सारे इटली देश को एक करके एक ,गवर्नमेंन्ट के आधीन कर देना ही उचित है। जब सब में एक प्रकार एकता हो जाय; तभी देश अन्य जाति के आक्रमण से निर्भय रह सकता है,और

उसी समय लोगों का यह कहना उचित होगा कि वे पञ्चायती शासन चाहते हैं अथवा अधिराजिक। मेजिनी की शिक्षा ने लोगों के हृदय पर इतना प्रभाव उत्पन्न किया कि फ्लोना तथा टसकनी ने नेपोलियन तथा आस्ट्रिया के सन्धिपत्र के अनुकूल करना अस्वीकार किया। दोनों सूबों की प्रजा ने शाह पेडमान्ट के आधीन रहना स्वीकार किया। शाह फ्रान्स ने क्युर को लिखा कि पेडमान्ट राजधानी को कदाचित् यह बात न माननी चाहिए, और क्युर ने इस लिखने को मान कर और भी अपनी नीच वृत्ति प्रगट करदी। परन्तु जब शाह फ्रान्स ने अपने भाई को वहां का गवर्नर नियत करके भेजा, तो वहां के लोगों ने इतना क्रोध तथा अप्रसन्नता प्रगट की कि शाह फ्रांस ने उस देश को छोड़ देना ही उत्तम समझा। फ्लोना तथा टसकनी ने अपनी स्वाधीनता स्थिर रक्खी और अन्त में शाह पेडमान्ट ने इनको भी अपने आधीन कर लिया। अब मेजिनी ने फिर अपना उपदेश आरम्भ कर दिया। उसका सिद्धान्त यह था कि इटली को सब वैर विरोध छोड एक हो जाने ही में लाभ है। उसने फिर शाह पेडमान्ट को एक चिट्ठी लिखी, कि यदि शाह अपने आपको जाति का लीडर बनाकर सारी इटली का आधीन करने की इच्छा करे, तो मेरी पार्टी के सब लोग प्रसन्नता पूर्वक उसकी सहायता करेंगे और यदि मेरा परिश्रम इसमें सफल हुआ तो सारा वैर विरोध दूर हो जायगा और इटली में केवल बादशाह और प्रजा के अतिरिक्त दूसरा कोई बोलनेवाला न रहेगा। इस चिट्ठी ने इतना कोलाहल मचा दिया कि बादशाह ने भी इसपर कुछ ध्यान न देना उचित समझा, क्योंकि क्युर का मान्य तो अब बिलकुल जाता रहा था और नवीन महामन्त्री इतनी सामर्थ्य नहीं रखता था कि सर्व साधारण की इच्छा के प्रतिकूल कोई अत्याचारी

कार्य्य करसके । ब्रोमेरियो, पेडमान्ट का प्रतिष्ठित इतिहास लेखक, इस चिट्ठी की नक़ल लेकर बादशाह के निकट गया। बादशाह ने तो चिट्ठी पहिले ही पढ़ ली थी । उसने उत्तर दिया कि तुम मेज़िनी को लिखो कि हमसे भेंट करे । पर मेज़िनी ने लिखा कि मैं आपसे भेंट करने के पूर्व सब बातों का निपटेरा कर लिया चाहता हूं। मेरे नियम ये हैं-" प्रथम यह कि बादशाह यह प्रतिज्ञा करे कि युद्ध उस समय तक जारी रक्खेगा जब तक कि सारे इटली पर विजय प्राप्त न कर लेगा और जबलों सारा देश इस के आधीन न हो जाय, क्यों कि मै अपना सिद्धान्त छोड़ केवल इस विचार से बादशाह का पक्ष लेता हूं कि यदि सर्वसाधारण की इच्छा अधिराजिक शासन की ओर अधिकतर है. और यदि जाति विकृर इमान्यु-एल को बादशाह करने पर प्रसन्न है तो मैं जाति की इच्छा के सन्मुख सिर झुकाता हूं और जातीय एकता प्राप्त करने के हेतु प्रस्तुत हू । दूसरे यह कि जब तक इस विषय में सफलता प्राप्त न हो,मेल की बात चीत न की जाय। मैं यह कदापि स्वीकार नहीं कर सकता कि आज एक भाग पर आक्रमण किया जाय और फिर वर्ष दो वर्ष तक चुप बैठ रहा जाय। तीसरे यह कि बादशाह शीघ्र मध्यप्रदेश को अपने राज्य में मिलाले। ऐसा करने से विजय की पूरी आशा हो सकती है । क्योंकि बादशाह के पास स्थलीय तथा जलीय सेना की संख्या बढ़ जायगी । मैं अनुमान करता हूं कि इस समय बादशाह के पास पांच लाख सेना का संयुक्त हो जाना कुछ कठिन न होगा । पर बादशाह के मन्त्रदाताओं में यदि कोई भी इस योग्य न हो जो इन बातों को भली भांति समझे वा समझा सके. तो एकता से काम करना केवल असम्भव है। चौथे यह कि बादशाह शीघ्र मध्यप्रदेश की छोटी छोटी राजधानियों को

लिख दे कि वे जलावतनों पर अत्याचार करना छोड़ दें और जेरिवाल्डी को सूचना दे दें कि यदि वह नेप्ल्स और रोमन सूबों के बनावटी सरहद को ठीक कर देगा, तो बादशाह इस पर चुप बैठा रहेगा और यदि आस्ट्रिया उससे युद्ध करने पर खड़ा होगा तो बादशाह उसकी सहायता करेगा। यदि आपको ये सब नियम स्वीकार हों तो शीघ्र अवशेष बातों का निर्णय हो सकता है। यदि आप को यह स्वीकृत नहीं तो भेंट करने की भी कुछ आवश्यकता नहीं। आप अपना काम करें और मुझसे जो होसकेगा स्वयं करूंगा"। परन्तु बादशाह में इतनी सामर्थ कहां थी जो इन नियमों को स्वीकार करता। वह अभी इसी चिन्ता में था कि मेजिनी को क्या उत्तर देना चाहिए कि फ्युर फिर ज़ोर पकड़ गया और फिर महामन्त्री नियत कर दिया गया। उसने मन्त्री होते ही फिर शाह नेप्ल्स और शाह-न्शाह फ्रान्स के साथ पत्र व्यवहार जारी किया, जिसका परिणाम यह हुआ कि इटली फिर से तीन भागों में विभाजित कर दी गई और मेजिनी के साथ सब पत्र व्यवहार बन्द कर दिया गया। पर उसकी इतनी सामर्थ न हुई कि जेरिवाल्डी की सेना को तितिर बितिर होने की आज्ञा दे। मेजिनी ने जेरीवाल्डी को लिखा कि अब तुम वही युक्ति करो जो मैंने अपनी चिट्ठी में बादशाह को लिखी थी और बादशाह विक्टर पर ज़ोर दो कि वह तुम्हारी सहायता करे, अथवा तुम स्वयं अलग होके कार्य करो। उसकी अनुमति यह थी कि प्रथम उत्तर विभाग में युद्ध प्रारम्भ किया जाय, क्योंकि वहां मवाद पका हुआ है और लोग इसका साथ देने को बिलकुल तैयार थे। मेज़िनी का यह विचार ऐसा सत्य और उचित था कि उन लोगों ने भी इसे प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार किया जो पहले मेल की सम्मति देते थे, तथा समय व अवकाश की बाट

जोहना अच्छा समझते थे। अब उनकी यह सम्मति थी कि मेज़िनी का उससे कुछ सम्बन्ध प्रगट न होना चाहिए, क्योंकि उसके नाम में पञ्चायती राज्य विषय ऐसा सम्मिलित हो गया था कि उसके नाम प्रगट होने से नेपोलियन फिर तत्काल आपड़ेगा और सारी कार्रवाई को बिगाड़ देगा। मेज़िनी ने जेरिवाल्डी को लिखा कि "उत्तर खण्ड में सब प्रबन्ध ठीक है, तुम इस काम में अगुआ बनो, यदि परमेश्वर ने सफलता दी तो निश्चय जानो कि मेरा जो सम्बन्ध इसके साथ है, वह कदापि प्रगट न होगा और इस विजय के कारण तुमही कहे जाओगे, और यदि निष्फलता हुई तो तुम इसका दोष मेरे गले मढ़ देना, और मैं सारे अपयश तथा अपवाद को प्रसन्नता पूर्वक सह लूंगा"। जेरिवाल्डी ने इस बात को स्वीकार कर लिया, और अपना स्वीकृत पत्र भेज दिया। परन्तु सयोगवश उसने यह हाल बादशाह से कह दिया। बादशाह अपनी साधारण चतुरता से शान्त बैठा रहा, और यद्यपि जेरिवाल्डी ने सूचना देदी थी कि कल कूच है, परन्तु बादशाह का एक प्राइवेट तार पहुंचतेही वह रात को कैम्प से निकल गया और मेज़िनी और सारी सेना मुंह देखती रह गई। पर मेज़िनी इस पर भी निराश न हुआ, यद्यपि उसे अत्यन्त दुःख प्राप्त हुआ। उसने अपने एक युवक मित्र को इस बात पर तत्पर किय कि वह जाकर सिसिली में लड़ाई का झंडा खड़ा करे। वह युवक उसका मित्र तथा चेला था, मेज़िनी ने ही उसमें देश-हितैषता तथा उत्साह का ज्ञान उत्पन्न किया था, और दोनों में परस्पर बड़ा स्नेह था। इस युवक का नाम पाइलो था। चलने के पहिले पाइलो तथा कुआडरियु ने फिर जेरिवाल्डी से प्रार्थना की कि वह इस काम में लीडर बने। पर जेरिवाल्डी ने घृणा से उत्तर दिया कि "यह काम मेज़िनी का एक स्वप्न

है'। पर पाइलो ने बड़ी दृढ़ता दिखाई और अन्त में यह कह उठ खड़ा हुआ कि तुम चलो अथवा न चलो, हमने तो लड़ाई की दृढ प्रतिज्ञा कर ली है। तब जेरिवाल्डी ने कहा कि यदि तुम आठ दिन लों लड़ाई लड़ते रहे तो मैं तुम्हारी सहायता को आ जाऊगा। तब पाइलो चल खड़ा हुआ, चलने के समय उसके पास केवल कुछ रुपये और पिस्तौल थे, जो उसको मेज़िनी ने दिये थे। पर वह स्वयं सिसिली का रहने वाला था, अपने देश बासियों से भली भांति परिचित था और उन पर उसको भरोसा था कि वे अपनी बात के पक्के हैं। यह बात पहिले ही से निर्णय हो गई थी कि ता० ३ अप्रैल को पलरमो में उपद्रव खड़ा किया जाय, पर वायु के विरुद्ध चलने के कारण वह ता० ११ को पहुंचा। पर सिसिली वालों ने ता०३ को ही नियत समय पर युद्ध प्रारम्भ कर दिया, और जब वह पहुंचा तो उसे मालुम हुआ कि शहर में लड़ाई छिड़ गई है, और गांवों में लोग शस्त्र से लैस युद्ध पर कमर बांधे खड़े हैं। उसने स्वय लीडर वन काम आरम्भ कर दिया, और लोगों मे उत्साह उत्पन्न करने लगा, जिसका फल यह हुआ कि बादशाही सेना को वह प्रत्येक लड़ाई में परास्त करता गया, और बादशाही बड़ी सेना से वह दो सप्ताह लों बड़ी वीरता से लड़ता रहा। निदान लड़ाई में जब उसने शाही सेना को पराजय करके पीछे हटा दिया, तो उसी समय उसको एक गोली लगी। पर उसी समय उसको समाचार मिला कि जेरिवाल्डी आन पहुंचा। वीर पाईलो हसता हंसता इस संसार से चल बसा, और अन्त समय यह कह कर मरा कि "धन्य है परमेश्वर! मैंने अपने कर्तव्य के पूरा करने में कुछ त्रुटि न की।"

क्युर और उसके पार्टीवाले स्पष्ट रीति से इस युद्ध के विरुद्ध यत्न करते थे। उन्होंने जेरिवाल्डी को पाइलो की

सहायता करने से रोका, यहां तक कि जब उसकी एक हज़ार सेना सिसिली टापू में जा उतरी, तौ भी वे यह यत्न करते रहे कि उससे यह प्रतिज्ञा करालें कि वह फिर नेप्ल्स की सरहद में न आवेगा। ऐसा कहते हैं कि स्वयं बादशाह ने अपने हाथ से यह चिट्ठी जेरिवाल्डी को लिखी। पर होनहार ऐसी प्रबल है कि उसके आगे राजों महाराजों की भी एक नहीं चलती।

जेरिवाल्डी को विजय पर विजय प्राप्त हुई, और जब वह नेपल्स के किनारे पहुंचा तो शाहबम्बा उसका नाम सुन मारे भय के भाग निकला। वीर जेरिवाल्डी बिना युद्ध के राजधानी में प्रविष्ट हुआ। लोगों ने उसके आने पर बड़ा प्रेम तथा उत्साह प्रगट किया, प्रसन्नता का शब्द हरेक घर से सुनाई देने लगा। जब इसका समाचार क्युर को मिला तो उसने यह प्रकाशित कर दिया कि यह सारी स्कीम बादशाह के सम्मत्यानुसार क्युर की पक्की की हुई थी, और उन्होंने नेपल्स में अपने एजेण्ट भेजे कि वहां की प्रजा को इस बात पर राजी करें। कि वे बादशाह के आधीन होकर रहें। मेज़िनी अबलों इटली में ही उपस्थित था और यद्यपि वह छिपा हुआ रात दिन इसी काम मे सयत्न रहता था। कभी वह शस्त्र बारूद इत्यादि तैयार कराता, कभी लोगों को युद्ध की शिक्षा देता। सारी इटली को उससे स्नेह था। इसलिये अब उसकी यह इच्छा हुई कि उत्तर खण्ड में सहायता भेजनी बन्द कर दी जाय, क्योंकि उसे पूर्ण विश्वास था कि लोगों का उत्साह तथा जेरिवाल्डी की योग्यता और उसके नाम की शक्ति इटली के उत्तर विभाग की रक्षा के लिये बहुत है। उसकी इच्छा थी कि अब वेनिस तथा पोप के देश को स्वतन्त्र करने की चेष्टा करनी चाहिए। उसने इसी अभिप्राय से जेनेवा में एक जङ्गी कमेटी संयुक्त की और इस नवीन कार्य के निमित्त प्रबन्ध

करना आरम्भ कर दिया। पर एक ओर से तो पेडमान्ट राज्य ने उसके मार्ग में रुकावटें डालनी आरम्भ की, दूसरी ओर वालन्टियर सेना ने यह इच्छा प्रगट की कि वे जेरिवाल्डी की सेनाध्यक्षता में लड़ेंगे। तीन वेर उसने इस प्रकार एकत्रित हुए मनुष्यों को तथा गोला बारूद उत्तर प्रदेश में भेज दिया। बहुतही थोड़े काल में विना किसी दूसरी सहायता के वह बहुत सा शस्त्र तथा स्टीमर और वीस हजार मनुष्य उत्तर खण्ड में सहायतार्थ भेज चुका था। पर फिर भी उसने आठ हज़ार सेना पोप के राज्य पर आक्रमण करने के निमित्त शस्त्र से लैस एकत्रित कर ली, क्योंकि पोप की समस्त प्रजा लड़ने पर कमर बांधे खड़ी थी। जेरिवाल्डी ने भी इस स्कीम को पसन्द किया, और सब लीडरों ने शुद्धान्तःकरण से प्रण किया कि अब वे फिर रोम में पञ्चायती राज्य स्थापित करने की चेष्टा न करेंगे।

इस पर शाह पेडमान्ट तथा उसके मन्त्रियों ने भी अपनी सम्मति देदी। मेजिनी को विश्वास था कि उसका यह स्कीम सफल होगा, और पोप पहिले की नाईं भाग जायगा। पर खेद का विषय है कि बादशाह ने सब कुछ स्वीकार कर करा के दो घन्टे पीछे अपने हाथ से एक चिट्ठी लिखी, जिसमें लोगों को आक्रमण करने से रोका। टसकनी के गवर्नर ने अपनी तोपों का मुह वालन्टियरों की ओर फेर दिया, यद्यपि शहर फ्लोरेन्स के निकट पहिले उसीकी आज्ञानुसार वालन्टियर भरती हुए थे। यह भय दिला कर उसने उनको मजबूर किया कि वे नेप्ल्स जाने के लिये जहाज़ पर सवार हों, क्योंकि वहां जेरिवाल्डी के विजयों से बादशाह कुछ लाभ उठाना चाहता था।

जिस पुरुष ने बादशाह को धोखा देकर उससे यह काम

कराया था, उसने अपनी शुद्धता जतलाने के लिये यह प्रगट किया कि बादशाह को यह विश्वास था कि मेजिनी ने पञ्चायती राज्य के लिये लड़ने को यह सेना एकत्रित की थी, इसलिये उसने ऐसा किया। मेज़िनी ने इसके उत्तर में यह लिखा "हे अधिराजिकशासन के सहायको ! तुम किस वस्तु से इतना भय करते हो ? क्या पञ्चायती राज्य का नाम मात्र तुम्हें भय भीत कर देता है ? यदि यह सत्य है तो तुम्हें हम फिर यही विश्वास दिलाते हैं कि जब पञ्चायती राज्य स्थापन करने के निमित्त हम तुम लोगों के सन्नद्ध करने की आवश्यकता पडेगी, तो तुम लोगों को पूर्व यथोचित सूचना देकर तब कार्य्यारम्भ करेंगे। यदि तुम्हें यह संशय है कि हम सब उच्च-पद की आकाङ्क्षा रखते हैं, तो हम तुम लोगों को शुद्ध अन्तः करण से विश्वास दिलाते है, कि हम लोगों की यह चित्तवृत्ति कदापि नहीं। हम सब केवल यही चाहते हैं कि सारी इटली एक मत हो एक राज्य के आधीन तथा एक शासन प्रणाली मे रहे और जब यह मनोकामना हमलोगों की पूरी हो जायगी तो हम सब फिर देश त्याग कर देंगे। और कदाचित् आप यह विचारते हों कि हम सब प्रशंसा तथा मान मर्यादा प्राप्त करने के हेतु यह कर रहे हैं, तो फिर हम यही कहते हैं कि यह विचार भी तुम्हारा मिथ्या है। हम तो सदा गुप्तभाव से कार्य करते रहे हैं। परन्तु यदि ऐसे ही तुम लोग लुइस नेपोलियन के आधीन होकर काम करते रहोगे तो सुन लो, हमारी दृढ़ प्रतिज्ञा है कि हम कदापि तुम्हारी आधीनता स्वीकार न करेंगे। यह हमारी दृढ़ प्रतिज्ञा और प्रण है। सर्वसाधारणकी सहानुभूति हमारे साथ है। यदि तुम एक ठौर से हमें निकाल दोगे तो हम दूसरी जगह जा खड़े होंगे और जब लों सारी इटली एक न हो जायगी हम पीछा न छोड़ेंगे। यदि तुम ही

यह काम सिद्ध करने में तत्पर हो जाओ तो हम तुम्हारे साथ हैं और यदि नहीं तो भी हम सब इटली पर अपनी जान न्योछावर किए हुए हैं और अपनी प्रतिज्ञा पर स्थिर हैं। यदि तुम हमारे इन लेखों को सर्वसाधारण के कानों तक पहुंचने से रोकोगे तो जान लो कि हम सब गुप्त प्रेस द्वारा यह काम पूरा करते रहेंगे। स्मरण रक्खो कि जब परमेश्वर को किसी जाति की उन्नति करनी स्वीकार होती है, तो वह ऐसे कारण वा उपाय उत्पन्न कर देता है कि एक लीडर के मरते ही दूसरा लीडर निकल खड़ा हो। हमने दृढ़ प्रतिज्ञा कर ली है कि हमारा देश हमारे हाथों में होना चाहिए। यदि जाति हमारा साथ दे तो जो जो परमेश्वर की इच्छा है उसके पूरा होने में तुम हमारा कुछ नहीं कर सकते।" इस स्कीम पर तथा पोप की सेना के अत्याचार के कारण सारी इटली में एक कोलाहल मच गया, जिससे बादशाह के हृदय में भी कुछ भय हुआ नेप्लस की राजधानी का कुल अधिकार अबलों जेरिबाल्डी के हाथ में था। राजकीय अपराधियों ने अपनी दुहाई उसके कानों तक पहुंचाई और सब देशहितैषियों ने ऐसी उत्तेजना से उससे अपील की कि उसने भी अपने देश भाइयों को छुड़ाने की अपने हृदय में ठान ली और रोम पर शीघ्र ही आक्रमण करने की इच्छा सूचना द्वारा प्रकाशित कर दी। इस सूचना के प्रकाशित होते ही बाद-शाह पेडमान्ट ने विचार लिया कि अब इसके अतिरिक्त कोई दूसरी युक्ति नहीं कि शीघ्र बागी सूबों पर अपना अधिकार जमा लिया जाय और नहीं तो उन सूबों के मनुष्य स्वयं अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेंगे और बादशाह हाथ मलता रह जायगा। क्युर ने यह ठान लिया कि शाही सेना जेरिबाल्डी के आने से पूर्व रोम में प्रविष्ट हो जाय

और इस भांति जेरिवाल्डी का सारा परिश्रम व्यर्थ जाय। मेजिनी ने भी यह समाचार जेरिवाल्डी को भेजा कि तुमने तीन सप्ताह से पूर्व रोम अथवा वेनिस की ओर यदि कूच न किया तो तुम्हारा आरम्भ किया काम तुम्हारे हाथ में न रहेगा। जेरिवाल्डी शीघ्र ही टसकनी को छोड़ नेप्ल्स की ओर चला, पर उसका सारा परिश्रम व्यर्थ था। उसका आरम्भ किया हुआ काम तो पहिले ही से उसके हाथ से निकल गया था। उसके चारो ओर बादशाह के पक्षपाती उपस्थित थे जो मन्त्रियों से गुप्त पत्र व्यवहार रखते थे और क्युर के सम्मत्यानुसार काम करते थे। उन्होंने शीघ्र मूर्ख लोगों को यह भड़काना प्रारम्भ किया कि रोम को स्वतन्त्र करने की ओर से मेज़िनी का हार्दिक अभिप्राय यह है कि जेरिवाल्डी के काम में एक विघ्न डाल कर पञ्चायती राज्य स्थापित करदे, जिसका परिणाम यह होगा कि योरप की दूसरी राजधानियां वीच में पड़ कर पुनः शाह नेप्ल्स को राजगद्दी पर वैठा देंगी और पुन देश का परिश्रम व्यर्थ जायगा। एक माननीय सत्पुरुष ने, जिसने कि एक वेर बादशाह के विरुद्ध बलवा करा दिया था, समाचार पत्रों में यों एक चिट्ठी मेज़िनी के नाम से लिखी, जिसका आशय यह था कि "यद्यपि तुम्हारे सिद्धान्त सत्य हैं, परन्तु तुम्हारे नाम के साथ पञ्चायती राज्य विषय ऐसा मिश्रित हो गया है कि तुम्हारी उपस्थिति से ही उपद्रव का संशय वना रहता है। यदि तुमको इटली से स्नेह है तो तुम उसके सबूत में स्वय इटली से बाहर चले जाओ" इस चिट्ठी का वास्तविक अभिप्राय यह था कि यदि वह स्वय इटली छोड देना स्वीकृत न करे तो राजकीय कर्मचारी शीघ्र उसे इटली से निकाल दें, क्योंकि जो राज आज्ञा मेज़िनी के प्राणबध की सारी इटली में प्रका-

शित की गई थी, राज्य की ओर से उसका कदापि उल्लघन नहीं हुआ। केवल नेप्ल्स राज्य के विनाश से मेजिनी दिन दहाड़े फिरता था। मेजिनी ने इटली छोड़ना अङ्गीकार नहीं किया और उत्तर लिखा "कि मैंने अपने सिद्धान्त को छोड़ कर अधिराजिक शासन का प्रचार सारी इटली में करना स्वीकार किया है। मेरा यह स्वीकार करना बादशाह अथवा महामन्त्री के डर भय से नहीं है, वरञ्च इस कारण से कि मेरे देशवासियों की सम्मति अधिकतर इसी ओर है। केवल इसी कारण मैंने अपने उस उपदेश को बन्द कर दिया है और अधिराजिक शासन के लिये यत्न करने पर प्रस्तुत हो गया हूं। वरं यह भी ठान लिया है कि जब कभी मेरी आत्मा मुझे इस बात पर बाध्य करेगी कि मैं पुनः अपने सिद्धान्त का प्रचार करूं, तो मैं पूर्व अपने मित्रों तथा शत्रुओं को इससे ज्ञात कर दूंगा। मै स्वयं अपनी रुचि से इस ओर अब अधिक परि-श्रम नहीं करना चाहता, और यदि तुम मेरी बात पर विश्वास करते हो तो तुम्हें उचित है कि तुम इसका विश्वास मेरे शत्रुओं को भी करादो और उनको समझा दो कि उनकी भ्रम शङ्का इन सारे उपद्रवों का कारण है। यदि तुमको अथवा उनको एक ऐसे मनुष्य की बातका विश्वास नहीं, जिसने गत तीस वर्ष में देशोन्नति के अतिरिक्त किसी दूसरी ओर ध्यान भी नहीं दिया, जिसने स्वयं अपने शत्रुओं को इटली के एक करने के लिये शिक्षा दी है और जिसने आज पर्यन्त किसी से मिथ्या सम्भाषण नहीं किया; यदि ऐसे मनुष्य के वाक्य पर तुमको अथवा उनको विश्वास न हो तो तुमको तथा उनको अधिकार है कि जो चाहो सो करो !"

इतना उत्तर लिख मेज़िनी नियमानुसार अपने काम में लगा रहा, क्योंकि उसका सदा यही मत था कि प्रत्येक मनुष्य

को अपना कर्तव्य पूरा करना चाहिए, परिणाम का देने वाला परमात्मा है। शहर की दीवारों पर अपने प्राणदण्ड का आज्ञापत्र चिपके देख उसे हंसी आती थी। अन्त में लोगों को उसकी सचाई पर विश्वास हो गया और फिर देशहितैषी जन उसके पास आने लगे। कई समाचार पत्र उसकी सम्मति के अनुमोदन करने के अभिप्राय से प्रकाशित होने लगे और लोगों में फिर उत्साह उत्पन्न हो गया। परन्तु इटली के बुरे दिन अभी समाप्त नहीं हुए थे जिसको लोग स्नेह पूर्वक देखते थे तथा अपना विश्वास पात्र विचारते थे और जो यदि इससे लाभ उठा कर चाहता तो रोम को स्वतंत्र कर देता, उसने ठीक अवसर पर इटली को धोखा दिया और नेप्लस का सूबा बादशाह के अर्पण कर आप कापरेरा में चला गया। उसने इतना भी न विचारा कि सूबा नेप्लस इटली का एक भाग है और इस कारण उसके प्रवन्ध में सर्वसाधारण की सम्मति लेनी आवश्यक है। जेरिबाल्डी के अनुगामी प्रशंसक इस धब्बे को यों मिटाते हैं कि बादशाह ने उससे प्रतिज्ञा की थी कि मैं रोम पर आक्रमण करूंगा। मेज़िनी को यह सुन कर बड़ा क्रोध हुआ और बादशाह के आने के पूर्व वह स्वयं शहर छोड़ कर चल दिया।

वास्तव में मेज़िनी का वाक्य इटली में जादू के समान काम करता था और उसकी उपस्थिति में लोगों में एक प्रकार की उत्तेजना बनी रहती थी। लोग इस पर अत्यन्त स्नेह रखते थे। परन्तु बहुत दिनों के दासत्व ने उनको निर्लज्ज तथा डरपोक कर दिया था। जिस समय स्वतंत्रता की झलक उनको दिखा दी गई, फिर वे ऐसे चौंधिया गए कि एक पद उठा कर दूसरा पद उठाना उनके लिये कठिन होगया। वे यह डरते थे कि परमेश्वर परमेश्वर करके जिस दास भाव से

निकले हैं, ऐसा न हो कि कोई ऐसा अनुचित काम हो जाने से फिर उसी अंधेरे कूंए में गिर पड़ें। चिरकाल के दासत्व ने उनके हृदय में साहस तथा पुरुषार्थ का चिन्ह तक न छोड़ा था और जहां कोई दूसरा राज्य उनसे युद्ध के लिये खड़ा होता, वे घवडा जाते, और यदि कोई दूसरा उनकी सहायता करने वा स्वयं उनके बदले काम करने पर प्रस्तुत होता, तो वे उसे अति दुर्लभ जान चुप बैठ जाते। 'यंग इटली' के उपदेश तथा परिश्रम से उनका रक्त उबलने लगा था, जैसा कि सं० १८४८ के वलवे से विदित होता है।

निदान कुछ काल बीत जाने पर जब लोगों को यह दृढ़ विश्वास हो गया कि बादशाह के हृदय में कुछ कपट अवश्य है और जातीय कर्तव्यता के पूरा करने से वह जी चुराता है तो लोगों ने फिर अपने उस सहायक का ध्यान किया, जिसने उनको केवल एक परमात्मा के आश्रय पर रहना सिखाया था। सं० १८६१ में फिर इटली के प्रसिद्ध स्थानों में बड़े उत्साह पूर्वक 'मीटिंग्स' होने लगीं जिसका फल यह हुआ कि शाही राजधानी ट्यूरिन निवासियों में उत्साह फैलता देख पार्ल्यामेन्ट ने यह रिज़ोल्यूशन पास किया कि अब से रोम इटली की राजधानी हुई। परन्तु फिर भी बादशाह रोम पर आक्रमण करने को न खड़ा हुआ और मन्त्रियों ने यह प्रगट किया कि बादशाह फ्रान्स के नेपोलियन की सहायता से रोम पर आक्रमण करने को प्रस्तुत है।

लोगों का उत्साह यद्यपि कुछ 'मन्द हो चला था, परन्तु बिलकुल जड़ मूल से नहीं चला गया था, और जब सं०१८६२ में जेरिवाल्डी को उसके पुराने मित्रों और सहायकों ने चारो ओर से दाबया, तो वह अपने निवासस्थान से निकला और एक कम्पनी वोलन्टियर की उसने इस अभिप्राय से एकत्रित

की कि रोम पर आक्रमण करे। पर मैज़िनी भली भांति जानता था कि बादशाह कदापि यह स्वीकृत न करेगा कि रोम पर आक्रमण करने के निमित्त जेरिवाल्डी उसकी राजधानी से वालन्टियर संयुक्त करे, क्योंकि ऐसा करने से लूइस नेपोलियन के रुष्ट हो जाने का संशय था। परन्तु यदि वेनिस के स्वतंत्र करने की चेष्टा की जाय और जेरिवाल्डी की वीरता तथा उसके नाम के प्रताप से उसमें सफलता प्राप्त हो, तो सारी जाति में आस्ट्रिया के विरुद्ध वैर भाव फैल जायगा और अन्त में रोम भी अपने हस्तगत हो जायगा। यह विचार उसने अपने एक मित्र को जेरिवाल्डी के निकट भेजा कि जिसमें वह उसे यह सब ऊंचा नीचा भली भांति दिखा दे। मेज़िनी ने लिखा कि "वेनिस को स्वतत्र करने के लिये बलवा करने में बादशाह रुष्ट नहीं हो सकता, और यदि तुम सहायता करने की प्रतिज्ञा करो और इस समय रोम के आक्रमण का विचार छोड़ दो, तो हम यह कार्य प्रारम्भ कर दें। यदि कुछ सफलता की आशा हुई तो तुम आकर हमारे साथ हो जाना, तुम्हारे नाम के प्रताप से बलवेवालों में एक प्रकार की सामर्थ्य शक्ति उत्पन्न हो जायगी, और अन्त में वेनिस की स्वतंत्रता का गौरव तुम्हीं को प्राप्त होगा, जैसे उत्तर विभाग की स्वतन्त्रता प्राप्ति का अभिमान तुम्हीं को है और यदि हम अपने उद्योग में निष्फल हुए तो इसका कारण तुम हम्हीं को प्रगट कर देना, तुम्हारा गौरव उसी प्रकार बना रहेगा। जो कुछ निन्दा वा विवाद होगा, उसे मैं प्रसन्नता पूर्वक सहन करूंगा।

परन्तु जेरिवाल्डी ने रोम पर आक्रमण करने के लिये बहुत हठ किया, और बादशाह ने भी उसे कहला भेजा कि क्या उसमें इतनी सामर्थ नहीं कि वह रोम पर आक्रमण करके योरप के रोमन केथोलिक राजधानियों को नष्ट करे। यदि

जेरिवाल्डी यह काम करेगा तो वादशाह आंख वन्द किए देखता रहेगा। जेरिवाल्डी ऐसा सीधा तथा सरल स्वभाव था कि उसने वादशाह की गत कार्रवाईयां सब भुला दीं। जब वादशाह को सेना ने उसकी सेना का मार्ग रोक लिया तब तक उसने यही आज्ञा दी कि शाही सेना पर गोली न चलाई जाय, क्योंकि उसे यह विश्वास था कि वादशाही सेना वैरभाव से नहीं आई है। परन्तु शीघ्र शाही सेना के कमानियर ने जेरिवाल्डी को आगे वढ़ता देख फ़ायर करने की आज्ञा दी। जेरिवाल्डी घायल हुआ और क़िला विर्गनेन् में वन्द किया गया। इससे वादशाह का छल भली भांति स्पष्ट होता है। जिसने जेरिवाल्डी पर गोली चलाई था वह इस प्रतिकार में एक उच्च पद पर नियुक्त किया गया। इटली के प्रत्येक नगर के लोग यह सुन कर क्रोधान्ध हो गए, पर एक सम्मत न होने से सबके सब गोली बारूद के शिकार वनें। जब हज़ारों जीव का वध हो चुका तो वादशाह ने एक पत्र प्रकाशित किया जिसमें मेज़िनी के अतिरिक्त सबको क्षमा प्रदान कर दी। इस वेर जेरिवाल्डी की सरलता के कारण निष्फलता प्राप्त हुई, और रोम के जय करने तथा स्वतंत्र करने का काम कुछ दिनों के लिये टल गया। सन् १८६३ में जब पोलैण्ड रूस के विरुद्ध बिगड़ खड़ा हुआ तो मेज़िनी ने पुनः अपने देश वालों को चैतन्य किया और लोगों को वेनिस पर आक्रमण करने में तत्पर किया। जब लोगों में कुछ उत्साह फैला तो फिर वादशाह ने मेज़िनी से पत्र व्यवहार आरम्भ किया, और लिख भेजा कि वादशाह भी वेनिस पर आक्रमण करना चाहता है, इस कारण मिल के काम करना अच्छा होगा और सफलता अवश्यमेव प्राप्त होगी। मेज़िनी ने लिख भेजा कि "मैंने सशपथ प्रण किया है कि

बादशाह से मेल नहीं करूंगा, तथा उसके वचन पर कभी विश्वास नहीं करूंगा, क्योंकि मुझे पूर्ण विश्वास है कि बादशाह अत्यन्त कायर है। ज्योंही फ्रांस कुछ धमकी देगा, तत्क्षण निज प्रतिज्ञा पालन का ध्यान उड जायगा. और इससे हमारे सारे परिश्रम व्यर्थ जायंगे"। मेजिनी ने फिर बादशाह को लिखा कि "यदि आप भी वेनिस को पराजय किया चाहते हैं तो आप हमको तथा वेनिस निवासियों को उनके पुरुषार्थ पर छोड़ उन्हें स्वय निज मनोकामना पूरी करने दें। जेरिवाल्डी को पूर्णतया अधिकार दे दिया जाय कि वह वालन्टियर सेना संयुक्त करे और आवश्यकता पर सहायता देने के लिये तैयार रहे'। मेज़िनी ने बादशाह को स्पष्ट रीति से समझा दिया कि न तो वह फ्रांस का भरोसा करे और न फ्रान्स से डरे, क्योंकि इन दोनो अवस्थाओं में सफलता सर्वदा असम्भव है। अन्त में इस पत्र का फल यह हुआ कि मेज़िनी ने बादशाह पर यह जता दिया कि वह स्वतन्त्रता पूर्वक यह काम करेगा, बादशाह से इस विषय में कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहता। उधर बादशाह की कायरता का एक और दृष्टान्त मिला। उसने लुइस नेपोलियन के साथ एक सन्धिपत्र लिखा, जिसमें लुइस ने यह प्रतिज्ञा की थी कि वह फ्रेञ्च सेना को रोम से हटा लेगा, परन्तु बादशाह को यह स्वीकार करना पडेगा कि वह पोप को गद्दी पर स्थिर रक्खेगा। बादशाह ने नेपोलियन को बहुत सा द्रव्य प्रतिकार में देने को कहा। प्रतिज्ञापत्र का यह भाग प्रकाशित कर दिया गया, क्योंकि वे विचारते थे कि ऐसा सुन कर लोग अत्यन्त प्रसन्न होंगे कि शत्रुओं कि सेना को देश से निकालने का समय आगया। रोम के स्थान में फ्लोरेन्स राजधानी नियुक्त की गई कि जिसमें पोप के मध्य प्रदेश के राज्य में कोई विघ्न डालने की

सामर्थ्य न कर सके। परन्तु इस सन्धिपत्र के साथ एक और गुप्त प्रतिज्ञापत्र इस विषय का लिखा गया कि शहर पेडमान्ट का अधिकांश भाग फ्रान्स को दे दिया जायगा और वेनिस में आस्ट्रिया शासन करता रहेगा। पर मेजिनी ऐसा सावधान रहता था कि उसको इन गुप्त प्रतिज्ञापत्रों का समाचार मिल गया। उसने यह समाचार पातेही तत्क्षण इसकी सूचना सर्व साधारण को देदी, जिसके फैलने पर सर्वसाधारण ने ऐसा क्रोध तथा अप्रसन्नता प्रगट की, कि जिन मन्त्रियों ने इसपर हस्ताक्षर किया था उनको मिथ्या बोलना पड़ा। पार्ल्यामेन्ट में यह प्रगट किया गया कि जो कुछ मेजिनी ने प्रकाशित किया है वह सर्वथा मिथ्या तथा असत्य है। पर मेज़िनी ने इस पर विश्वास न किया, और उसने फिर एक निवेदन पत्र इस विषय का प्रकाशित किया कि "हम सब ने इटली को एक करने का प्रण किया था। पर इस गुप्त सन्धिपत्र से उस प्रण का प्रतिरोध हो जाता है, और वह सब आशा मिट्टी में मिल जाती है। लोगों को स्मरण होगा कि हमने पञ्चायती राज्य विषयक प्रचार करना इसी नियम पर स्वीकार किया था कि वर्त्तमान गवर्न्मेंन्ट इस दुस्तर कार्य को पूरा करेगी। परन्तु अब गवर्न्मेन्ट ने एक और प्रतिज्ञा करली है और अपनी पूर्व प्रतिज्ञा के पालन का ध्यान भी छोड़ दिया है। इस कारण हम पर भी उसका पालन उचित नहीं। सारे इटली देश को एक राज्य बना देना, तथा रोम को राजधानी नियुक्त करना हमारा अभिप्राय है। यदि बादशाह हमारी सहायता करता तो अति उत्तम था। यदि न करेगा तो भी हम अपनी मनोकामना पूरी करने में कुछ त्रुटि न करेंगे। परन्तु अब यह सन्धिपत्र स्वीकृत करके बादशाह ने यह स्पष्ट कर दिया कि बादशाह न केवल हमारी सहायता ही नहीं करेगा, वरञ्च हमसे लड़ाई

भी करेगा। अतएव अब हम सबके लिये इसके अतिरिक्त कोई दूसरा उपाय नहीं रहा कि हमलोग फिर अपने प्राचीन सिद्धान्त का प्रचार उठावें और लोगों को इसका पूर्ण विश्वास दिलादें कि पञ्चायती राज्य बिना इटली को स्वतंत्रता प्राप्त होनी महा दुर्लभ है'। उसने अबकी वेर बड़ी उत्तेजना से अपील की कि चाहे कुछ ही क्यों न हो, पर हम लोगों को सब कठिनाइयां सहन करके रोम और वेनिस को जय करना चाहिए, क्योंकि जब तक ये दोनों मिल कर एक न हो जायंगे तब तक जातीयता स्थापित करनी असम्भव है। उसने लोगों से कहा कि "यदि बादशाह हमारे इस धर्म कार्य में कठिनाई उपस्थित करेगा तो उस समय हमारा यह धर्म होगा कि हम लोग बादशाह से भी युद्ध करें, और अधिराजिक शासन के स्थान पर पञ्चायती राज्य की पताका फहरावें'। ज्योंही यह समाचार फैला नेपोलियन के महामन्त्री ने पेडमान्ट राज्य को इस बात की धमकी दी, कि यदि जातीयता की अनुमति को दबा कर स्वप्रतिज्ञा पालन नहीं किया जायगा, और यदि गवर्न्मेंन्ट सर्वसाधारण पर यह विदित न कर देगी कि रोम कदापि राजधानी नहीं हो सकती और उनको फ्लोरेन्स राजधानी स्थिर रहनेही देनी पड़ेगी, और वे पोप के राज्य का लोभ कदापि न करें, और अन्त में यदि बादशाह देशहितैषिता की अनुगति को दबा कर पोप की रक्षा भली भांती न करेगा तो केवल फ्रान्स ही नहीं, वरं योरप की समस्त रोमन केथोलिक राजधानियां उस पर चढ़ आवेंगी। इस धमकी का फल यह हुआ कि नेशनेल पार्टी के साथ अधिकतर अत्याचार किया जाने लगा, जिस कारण लोग विशेष उत्तेजित तथा उत्साहित हो चले।

मेज़िनी इटली में अपराधी के समान था, वहां यह आज्ञा

थी कि यदि वह पकड़ा जाय तो उसे प्राणदण्ड दिया जाय। सन् १८६५ में मेसिना निवासियों ने इस आज्ञा पर कुछ ध्यान न देकर उसे इटालियन पार्ल्यामेन्ट का मेम्बर अपनी ओर से नियुक्त किया, और लिख भेजा कि हम लोग ऐसी आज्ञा की कुछ परवाह नहीं करते। परन्तु स्वयं मेज़िनी ने मेम्बर होने से अरुचि प्रगट की, क्योंकि उसकी आत्मा ने यह स्वीकृत न किया कि वह अधिराजिक शासन की शुभचिन्तना का प्रण करे। उसने अपने देशवासियों को यह जनाया "कि यद्यपि मुझे सर्वसाधारण के सम्मत्यानुसार सारी इटली को एक करना रुचिकर है, परन्तु मैंने अपना प्राचीन मत कदापि नहीं छोड़ा है। अब मैं एक अधिराजिक शासन की शुभ चिन्तना की प्रतिज्ञा नहीं कर सकता, विशेषतः जब कि बादशाह ने ऐसे नीच नियमों पर फ्रान्स के साथ समालाप कर के मुझे इस बात पर बाध्य किया है कि मैं विद्रोह का झंडा खड़ा करूं और अपने देश को पोप के चंगुल से छुड़ाने में सयत्न होऊं"। सन् १८६६ में प्रशिया और आस्ट्रिया के बीच लड़ाई के चिन्ह देख पड़े और इटली ने भी आस्ट्रिया से युद्ध करने की बड़ी उत्तेजना प्रगट की। चारो ओर से युद्ध की प्रतिध्वनि सुनाई देने लगी, यहां तक कि बादशाह के लिये चुप बैठना भी कठिन दिखाई देने लगा। लोगों ने बादशाह को समझाया कि इससे बढ़ कर फिर अवकाश इटली को आस्ट्रिया के चंगुल से छुड़ाने का न मिलेगा, क्योंकि इस समय उसको एक प्रबल शत्रु से युद्ध करना है। बादशाह ने भी यह विचारा कि यदि वह इस समय प्रजा के इच्छानुसार न करेगा तो उसे स्वयं अपने राज्य से हाथ धोना पड़ेगा, जैसा कि सन् १८४७-४८ में इटली के मध्यप्रदेश की छोटी छोटी राजधानियों के साथ हुआ था। इस समय मेज़िनी ने इस युद्ध विषय पर

एकाध लेख लिखे जिनमें उसने अपने देशवासियों को यह चेतावनी दी कि "वे लोग फ्रान्स से सहायता लेना कदापि अङ्गीकार न करें और न फ्रान्स को इटली भूमि में आने की आज्ञा दें। क्योंकि ऐसा करने से युद्ध समाप्तिके पश्चात् इसके बदले में उन्हें अवश्य कोई न कोई देश देना पड़ेगा"। उसने यह भी भली भांति दिखाया कि "फ्रान्स से सहायता लेनी, तथा प्रशिया से मित्रता करनी, ये दोनों कार्य समान हानिकारक होंगे और यह हमारे सिद्धान्त के विरुद्ध होगा, क्योंकि जिस अन्यायी राज्य ने पोलेन्ड के विरुद्ध रूस की सहायता की थी और अपनी प्रजा की स्वतन्त्रता छीन ली थी, उसके साथ मित्रभाव करना जातीय महापराध है। इटली वासियों को उचित है कि अपने पुरुषार्थ तथा परिश्रम पर भरोसा कर आस्ट्रिया से युद्ध करें। यदि सहायता की आवश्यकता हो तो उन जातियों से सहायता के लिये प्रार्थी हों जिनको आस्ट्रिया ने उनके समान दासत्व में बन्द कर रक्खा है। यह हमारा काम नहीं कि बादशाहों की लड़ाई में हम किसी एक बादशाह की सहायता करें। वरञ्च हमारा यह कर्त्तव्य है कि स्वतन्त्रता के हेतु युद्ध में अपने जैसी पददलित जातियों से सहायता लें, तथा अवसर पड़ने पर उन्हें सहायता दें"। अन्त में उसने अपने देश भाइयों से अपील की कि वे वालन्टियर होकर आस्ट्रिया से युद्ध करें। इटालियन गवर्न्मेन्ट ने उन पत्रों को रोक दिया जिनमें ये चिट्ठियां प्रकाशित हुई थीं। परन्तु फिर भी इन चिट्ठियों ने ऐसा उत्साह फैलाया कि ९५ हज़ार वालन्टियर एकत्रित हो गए। युद्ध महामन्त्री सेना केइस उत्साह को देख ऐसा घबड़ाए कि उन्हों ने बहुतेरों को यह उत्तर देकर टाला कि स्वयं शाही सेना आवश्यकता से अधिक है। आप लोगों की सहायता की कुछ आवश्यकता नहीं। मेसिना निवासियों ने

र दूसरी वेर मेज़िनी को अपनी ओर से मेम्बर पार्ल्यामेन्ट युक्त किया, परन्तु पार्ल्यामेन्ट की अधिकतर सम्मति विपत होने के कारण वह स्वीकृत नहीं किया गया। इस प्रकार र्वसाधारण की सम्मति ने बादशाह को युद्ध करने पर मजर किया। यदि बादशाह में अंशमात्र भी देशहितैषिता होती, तो वह आस्ट्रिया के इस पराजित होने से बहुत लाभ उठाता और बिना फ्रान्स की सहायता के युद्ध जारी रखता। परन्तु उसे तो अपनी प्रजा से और भी भय था। जेरिवाल्डी तथा उसके वालन्टियर पुनः बुलाए गए। जेनरल मेडिसी भी, जो जय प्राप्त करता चला जाता था, शीघ्र बुला लिया गया, यहां तक कि इटालियन सेना के दो अफसर केवल फ्रान्स के छल से दो स्थानों पर पराजित हुए। सर्वसाधारण शीघ्रही इस कृत्रिम कार्य को समझ गए, और मेज़िनी की उस भविष्यत् वाणी का जो उसने फ्रान्स से एक गुप्त निबन्धन पत्र के विषय में की थी, ध्यान आ गया, और सबको इस पर पूर्णरीति से विश्वास हो गया। प्रिंस बिस्मार्क ने जर्मनि में उस निबन्धन पत्र को प्रकाशित कर दिया, और यह लिखकर दिया कि "इटालियन स्वतन्त्रता के विषय में फ्रान्स तथा बादशाह इटली कैसी कृत्रिम कारवाई करते रहे हैं"। इधर मेज़िनी ने पहिले ही से लोगों को इससे अभिज्ञ कर दिया था। इन सबका फल यह हुआ कि इस गुप्त निबन्धनपत्र का परस्पर प्रतिपालन असम्भव हो गया। नेपोलियन का यह साहस न हुआ कि वह पेडमान्ट के उस भाग पर अपना अधिकार करले जो बादशाह ने उसे दिया था, क्योंकि लोग मरने मारने पर प्रस्तुत थे। नेपोलियन को युद्धसे कुछ लाभ न देख पड़ा, इस कारण उसने लड़ाई बन्द कर दी। आस्ट्रिया ने वेनिस देश फ्रान्स को देदिया और फ्रान्स ने उसे इटली को लौटा दिया, परन्तु इटली के उत्तर

विभाग की बस्तियां वैसे ही आस्ट्रिया के अधिकार में रहीं यद्यपि मेज़िनी चिल्लाता रहा कि जबलों सारी इटली पर जय न हो मेल न करना, परन्तु उसकी किसी ने न सुनी। सब शाही प्रेस ने बड़ी उत्तेजना से मेल के लिये प्रस्ताव किया। फ्रान्स की बड़ी प्रशंसा की तथा बादशाह की बुद्धिमत्ता को सराहने लगे और विचारे मेजिनी की बडी निन्दा की। बादशाह ने मेज़िनी का मुंह बन्द करने के लिये उसका अपराध क्षमा कर दिया। परन्तु मेज़िनी इससे कब लोभ में आता था। वह पहिले के समान अपने सिद्धान्त तथा कर्तव्य में सयत्न रहा, और अन्तिम समय तक यही चिल्लाता रहा कि जब तक आल्पस् पर्वत दूसरे शत्रुओं के अधिकार में रहे तब तक युद्ध कदापि बन्द नहीं करना चाहिए। जब उसे समाचार मिला कि उसे क्षमा प्रदान कर दी गई है, तो वह हँसा और बोला "यदि बादशाह यह आशा रखते हैं कि मैं अपने पूर्व आचरणों का त्याग कर अब अधिराजिक शासन का पक्ष लूगा, अथवा इस अनुग्रह से अनुगृहीत हो अपना कर्त्तव्य छोड़ दूगा. यदि बादशाह ने ऐसा विचारा है तो उन्होंने बड़ी भूल की है। मैंने ससार की समस्त वस्तुओं को त्याग कर इटली की शुभचिन्तना को अपना एकमात्र कर्त्तव्य मान रक्खा है, और ऐसी कठिनाइयों में मैं अपने प्रण पर दृढ़ रहा हूं जबकि और दूसरे लोग निराश हो चुके थे। अब इटली से ऐसे नीच कर्म हुए हैं कि इस क्षमाप्रदान होने पर भी मेरा चित्त नहीं चाहता कि मैं इटली में पद धरू"। उसने अब पब्लिक पर यह प्रगट करना आरम्भ किया कि "शाही राज्य को यथोचित अवकाश दिया जा चुका है। अब यह भलीभांति सिद्ध हो गया कि इटली का उद्धार अधिराजिक शासन से कदापि सम्भव नहीं। सन् १८५९ से आज पर्य्यन्त पञ्चायती

राज्य पार्टी ने अपना सिद्धान्त छोड़ शाही राज्य की सहायता की है, क्यों कि हमारी पार्टी सर्वसाधारण की इच्छा के प्रतिकूल करना कदापि नहीं चाहती। आज पर्य्यन्त हमने यह अवकाश दिया था कि अपनी जाति अधिराजिक शासन की परीक्षा लेले और उसके विषय में एक सम्मति निश्चित करले, जिसमें कोई यह न कहे कि हमने निज उन्माद से स्वजातीय स्वतन्त्रता के मार्ग में कठिनाइयां खडी कर दी हैं। परन्तु अब जबकि अधिराजिक शासन ने स्वजाति के साथ छल किया है और ठीक अवसर पर आल्प्स के उत्तर प्रदेश को एक विदेशी जाति को सौंप दिया है, तो इस अन्तिम नैराश्य से हमको इसके अतिरिक्त कोई दूसरा मार्ग नहीं कि हम पुनः पंचायती राज्य के लिये झंडा खडा करें और दूसरे विभागों के स्वतन्त्र करने का यत्न करें"।

इसी वर्ष शहर पलरमु में बलवा हुआ। परन्तु दूसरे प्रान्तों ने साथ न दिया, इस कारण शाही सेना ने पराजित करके बहुत काल लों अपने अधिकार में उसे रक्खा। इस निष्फलता का कारण यह था कि नैशनल पार्टी में परस्पर विरोध फैल गया था। जेरिबाल्डी और मेज़िनी में भी मतविभेद पड़ गया। "मेज़िनी जो कुछ करता था नैशनल पार्टी के नाम पर किया चाहता था। परन्तु जेरिबाल्डी कहता था कि नहीं प्रत्येक काम राजा के नाम पर करना उचित है"। जेरिबाल्डी लिखता है कि "जब मैं बालक था, और मेरा हृदय भांति भांति की कामनाओं से परिपूर्ण था तब मैं एक ऐसे मनुष्य की खोज में था जो मेरी उस युवावस्था में मेरा पथदर्शक बनता और मुझे उपदेश देता। जैसे कोई तृष्णा से व्याकुल पानी खोजता फिरता है, वैसेही मे भी किसी उपदेशक की खोज में था। भाग्यवश मैं इसके पाने में कृतकार्य्य

हुआ, जिसने कि उत्साह की आग मेरे हृदय से बुझने नहीं दी। जब सारी इटली अज्ञान रूपी निद्रा में पड़ी थी, तब केवल यही मेरा मित्र चैतन्य तथा जाग्रत कहा जा सकता था। वह सदा मेरा मित्र बना रहा, तथा सदा अपने देशानूराग के विचार मे पड़ा रहा। यह मनुष्य जोज़ेफ़ मेज़िनी था"।

पर अन्त अवस्था में मेजिनी तथा जेरिवाल्डी में बड़ा मतभेद हो गया था, और कहा जाता है कि जैसे मेजिनी तथा क्युर के मत में अन्तर था वैसेही मेज़िनी और जेरिवाल्डी के मानसिक विचारों में अन्तर पड़ गया था। "उपदेशक कहता था कि शिष्य में कल्पना शक्ति नहीं है, और शिष्य अपने गुरु में साधन शक्ति के अभाव का दोष ठहराता था"। यही परस्पर विरोध का कारण था। यद्यपि मेज़िनी के लेख में जातीय उत्साह पहिले के समान स्थिर था और लोग उसके लेखों को पढ़कर देश के लिये जान देने पर तैयार थे, परन्तु परस्पर विरोध ने सब काम नष्ट कर रक्खा था।

जेरिवाल्डी को यह विश्वास था कि बादशाह उसका सहायक है। जेरिवाल्डी ने मेज़िनी की इच्छा के प्रतिकूल वालन्टियर सेना सयुक्त की और रोम पर आक्रमण करने में कुछ शीघ्रता की, जिसका फल यह हुआ कि वह पराजित हुआ और जिस बादशाह के हेतु उसने अपनी पार्टी से विरोध किया था, उसी बादशाह ने प्रतिकार में इसको बन्दीगृह में डाल दिया। रोम से निकलते ही शाही सेना ने जेरिवाल्डी को घेर लिया और एलेक्जेण्ड्रिया फोर्ट में कैद किया।

यद्यपि नैशनल पार्टी के समाचार पत्र रोक दिए गए थे, तथा सैंकड़ों मनुष्य बन्दी बना लिए गए थे, नाना प्रकार से यत्न किया गया कि लोगों में अंशमात्र भी देशोत्साह शेष न रहे, परन्तु मेज़िनी की लेखनी में जो जादू के समान शक्ति थी

उसे कोई क्योंकर क्या करता। इधर निष्फलता हुई उधर पुनः काम प्रारम्भ हो गया। बादशाह अत्यन्त अकुला गया था और इसी चिन्ता में रहता कि किसी युक्ति से इसकी प्रतिष्ठा तथा बात का विनाश करदे। और वास्तव में केवल एकही उपाय था जो बादशाह और उसकी पार्टी वाले कर सकते थे, कि उसका अपमान करादें, उसपर भली भांति मिथ्या कलङ्क लगादें और इस प्रकार उसको मान रहित करदें। अन्तमें उस पर लूट मार का कलङ्क लगा शाही पार्टी ने स्वीज़रलैण्ड गवर्नमेंट से प्रार्थना की कि मेजिनी को अपने राज्य से निकाल दे। मेज़िनी ने इसके प्रत्युत्तर में पबलिक को एक चिट्ठी लिखी जिसका अभिप्राय यह थाः--वर्तमान समय में जो मिथ्या दोषारोपण मेरे विषय में किए गए हैं, उससे स्पष्ट प्रगट होता है कि तुम लोग नीच कायर तथा निर्बोध हो। नीच इस कारण हो कि तुम जान बूझ कर मिथ्या दोष मेरे सिर मढ़ते हो। कायर इस कारण हो कि इतना धन सम्पदा तथा इतना सेनादल रखकर भी तुम लोगों से और कुछ न बन पड़ा और एक गुप्तचर मेरे पीछे छोड़ते हो तथा झूठी निन्दा करके मेरा अपमान कराते हो, जिससे तुम्हारी कायरता प्रगट होती है। निर्बोध इस कारण कि तुम्हें इस बात का विश्वास है कि सर्वसाधारण तुम्हारे इन मिथ्या वचनों पर विश्वास करके मुझे तथा मेरी पार्टी को लुटेरा प्राणनाशक समझेंगे। जाति तुमसे भली भांति विज्ञ है और रहे सहे हाल अब धीरे धीरे उन पर प्रत्यक्ष होते जाते हैं। लोग जानते हैं कि प्रभुत्व प्रकार किस प्रकार धन दौलत में तुमने अपने हाथ रंगे हैं और ठीक अवसर पर जाति को बीच धारा में छोड़ दिया है, लोग जानते हैं कि जब कभी मैंने अधिकार पाया है तो अन्त समय किस क्षुद्र दशा में मैं गया हूं। उनको यह भी ज्ञात है कि मेरी पार्टी

के कितने मनुष्य जलावतनी में मर गए। यद्यपि मैं भूलरहित रहने का प्रण नहीं करता तथापि उनपर भली भांति विश्व है कि मुझमें वे अवगुण नहीं जिनके वश हो मनुष्य दूसरों के उचित अधिकार की परवाह नहीं करते। यदि सर्वसाधारण तुमसे अप्रसन्न हैं और प्रत्येक समय तुम्हारे विरुद्ध कार्य करने में तत्पर रहते हैं, तो इसका कारण यह है कि तुम अत्याचारी हो, तथा अन्याय करते हो। राजकीय उच्चपद केवल उन्हींको दिया जाता है जो धनाढ्य हैं, तथा उच्चवंशोत्पन्न हैं। उत्कोच लेना तथा कुशासन चारों ओर फैल रहा है, मनुष्य बुद्धि कौशल की उन्नति रुकी हुई है, सर्वसाधारण में अज्ञानता की दिनों दिन वृद्धि है। सर्वसाधारण न तो शस्त्र रखते हैं, न पार्ल्यामेण्ट में मेम्बर नियुक्त होने का अधिकार रखते हैं। यही कारण है जिनसे समय समय पर बलवे हुआ करते हैं, जिसका प्रत्यक्ष फल यह है कि न तो शान्ति भाव स्थिर रहने पाता है और न निज व्यापार की उन्नति होती है। जिस बात से तुम डरते हो उसका कारण तुम मुझे बताते हो, एवम मुझे अभिष्ट हुआ कि मैं अपने विषय में कुछ लिखूं। स्मरण रक्खो कि जबलों मैं जीवित हूं, मैं तुम्हारा शत्रु हूं। तुमने मेरी जन्मभूमि के गौरव को मिट्टी में मिला दिया है और उसकी भविष्यत् उन्नति के रोकने में जैसे तुमने कुछ त्रुटी नही की है, वैसेही मैंने भी उसके उद्धार तथा उन्नति करने में कुछ त्रुटि नहीं कि है। यद्यपि इटली से मुझे इतना स्नेह है, तथा तुम जैसे अधम पापियों से इतनी घृणा है, तथापि तुम्हारे विरुद्ध मैंने कदापि कोई दुष्कर्म तथा नीच व्यवहार नहीं किया, कभी तुम पर ऐसे अनुचित कलंक नहीं लगाए जिनकी सचाई में मुझे विश्वास न था, कभी तुमको अपनी इच्छा अनुकूल काम करने से नहीं रोका। जब सन् १८४८ में तुमने प्रकाशित

किया था कि अधिराजिक शासन निज धर्म पालन के लिये आस्ट्रिया से युद्ध करता है और लड़ाई की समाप्ति पर जो जाति की इच्छा होगी वह किया जायगा, मैंने केवल उसी बात की परीक्षा करने के लिये, कि तुम अपने वचन का प्रतिपालन करते हो अथवा नहीं, तुम्हारा विरोध नहीं किया यद्यपि मुझे विश्वास था कि तुम्हारी बात कदापि सत्य नही। फिर सन् १८५६ तथा सन् १८६६ में तुमने लोगों से कहा कि बादशाह के पास इतनी सेना उपस्थित है कि वह सारे देश को पराजित करके अन्य देशीय आक्रमणों से उसे संरक्षित रक्खे और उनके स्वदेशीय अधिकार उनको दे दे, और फिर यह प्रगट किया कि बादशाह की यह इच्छा है कि रोम और अल्प्स की पहाड़ी बस्तियां विजय करके वहां उनके इच्छानुकूल शासन कर दिया जायगा। यद्यपि उस समय भी मुझे तुम पर विश्वास नहीं था, पर केवल यह विचार कर तुम्हें मैंने अवकाश दिया था कि तुम अपनी प्रतिज्ञा पालन कर सको। मैंने केवल पंचायती राज्य विषयक प्रचार बन्द ही नहीं कर दिया वरन् युद्ध में तुम्हारी सहायता भी की, और मध्यप्रदेश तथा दक्षिण प्रान्त पर तुम्हारा अधिकार करा दिया था और कुछ काल तक गुप्त कार्रवाइयों को भी रोक दिया था तथा तुम्हारे साथ प्रतिज्ञा की थी कि जब कभी मेरी आत्मा पुनः मुझे पंचायती राज्य विषयक प्रचार करने पर बाध्य करेगी, तो तुमको पहिले से कह दूंगा। इसीसे सन् १८६६ में यथोचित सूचना देकर तब मैंने पुनः पंचायती राज्य प्रचार प्रारम्भ किया और तुम्हें कहला भेजा था कि यदि तुम लड़ा चाहते हो तो लड़ लो। अब बताओ कि हममें से कौन वचन बद्ध तथा कौन निज प्रतिज्ञा उल्लंघन करने हारा ठहरा। क्या मैं निज वाक्य उल्लंघक हूं जिसने तुमको कई अवकाश दिये, तुमसे मेल किया

और अन्त में तुम्हारी ओर से निराश होने पर तुमसे अलग हो गया ? क्या इस अवस्था में तुम निज प्रतिज्ञा प्रतिपालक ठहर सकते हो कि जिसने सैकड़ों देशहितैषियों के प्राण नष्ट कर डाले, मिथ्या वाक्य तथा सूचना से लोगों को धोखा दिया और उलटे हमी लोगों को प्रतारक प्राणनाशक प्रगट किया ? रोम का नाम तथा गौरव तुम्हारे हाथ में था, वह रोम जिसकी ऐतिहासिक प्रशंसा तथा प्राचीन सभ्यता के नाम पर तुम सारे संसार में माननीय होने के अधिकारी हो सकते थे ! परन्तु खेद का विषय है कि तुमने रोम को पोप को सौंप के सब कुछ मिट्टी में मिला दिया और अन्त में एक ऐसा निबन्धन पत्र स्वीकार कर लिया जिसके अनुसार रोम पुनः तुम्हारे हस्तगत कदापि नहीं हो सकता।

"वर्षों के परिश्रम तथा उद्योग से फिर जिलावतनी और फाँसी से निर्भय हो, सैकड़ों प्राणों को नष्ट कर जो उत्कट इच्छा मैंने इटालियन हृदय में उत्पन्न करदी थी, और जिस राजधानी को मैंने ऐसा भयभीत करके हिला दिया था, खेद है कि तुमने अपनी कार्रवाईयों से उन सबको मिटा दिया और परस्पर विरोध का ऐसा बीज बो दिया है कि जो देश के लिये अत्यन्त हानिकारक है। मैं नहीं चाहता कि अपने जीवन के अन्तिम समय को एक राजनैतिक प्रश्न के संशोधन में व्यतीत करूं और पंचायती राज्य के लिये हाथ पैर मारूँ, क्योंकि मुझे पूर्ण विश्वास है कि एक न एक समय तो पंचायती राज्य अवश्य ही स्थापित होगा। पर मैं उस अपमान तथा निर्लज्जता का कलङ्क इसी भांति से नहीं छोड़ सकता जो कि तुम्हारे कारण जातीय मस्तक पर लगा है, क्योंकि यदि उचित समय पर ये कलङ्क न मिटा दिए जाँयगे तो फिर यह सदा के लिये बने रहेंगे। जो जाति कि पुरुषार्थ रख कर भी अपने आप

को एक विदेशीय जाति के तिरस्कार तथा अन्याय को सहन करती है और स्वयं स्वतन्त्रता प्राप्त करने के अतिरिक्त उतनी ही स्वतन्त्रता पर सन्तुष्ट हो जाती है जितनी कि वह विदेशीय जाति अपने अनुग्रह से दे देती है, तो वह जाति जातीयता की श्रेणी से गिर जाती है और उसके उठने की कुछ आशा नहीं रहती। महात्मा लेमन्स ने अपनी मृत्यु के कुछ काल पूर्व लोगों से यह कहा था कि स्मरण रक्खो कि जब कभी तुम उस अधिकार के पाने की चेष्टा करोगे जो तुम्हारी अन्यायी गवर्न्मेंन्ट ने तुमसे छीन लिया है, तो वे लोग अवश्य तुमको राजकीय विद्रोही कहेंगे और शान्ति में विघ्न डालने हारा बतावेंगे। परन्तु उचित रीति से तुम राजविद्रोही उसी समय कहे जा सकते हो जब कि स्वदेशीय राज्यके विरुद्ध तुम विरोध फैलाओ। वास्तविक विद्रोही वे लोग हैं जो अपने लिये, अधिक अधिकार नियत करालेते हैं और बल तथा धोखे से लोगों को दास बना कर रक्खा चाहते हैं। ऐसे लोगों के बल को घटाना तथा उनके शासन को नष्ट करना मानो परमेश्वर की आज्ञा का प्रतिपालन करना है। तुम कहते हो कि जाति तुम्हारे साथ है। यदि यह सत्य है तो फिर तुम क्यों मुझ पर असत्य कलङ्क लगाते हो, क्यों मेरे मत के प्रचार से भय खाते हो? मुझे स्वतन्त्रता पूर्वक अपने भाव का प्रचार करने दो, मेरे समाचार पत्रों को स्वतन्त्रता पूर्वक अपनी अपनी सम्मती प्रगट करने दो, मुझको मिल कर सभाएँ सयुक्त करने की स्वतन्त्रता देदो, चाहे मेरा अभिप्राय वा प्रोग्राम कुछ ही क्यों न हो। मेरे प्रत्येक पार्टी वाले को इतनी स्वाधीनता होनी चाहिए कि वह जहां चाहे जाय और जाकर अपने मत का प्रचार करे और गवर्न्मेंन्ट की ओर से कुछ भी विघ्न न डाला जाय, मेरे चिट्ठी पत्रादि की रक्षा

की जाय और मुझे भी इतनी स्वाधीनता प्रदान कर दी जाय कि मैं शहर शहर स्वतन्त्रता पूर्वक भ्रमण करूँ और सभाएं संयुक्त करके अपनी सम्मति लोगों के समीप प्रगट करूं। यदि तुम इस बात की प्रतिज्ञा करो तो मैं भी प्रतिज्ञा करता हूं कि कभी कोई गुप्त कार्रवाई न करूंगा और कभी उस प्रकार के युद्ध की तैयारियां न करूंगा जिनको तुम राज-विद्रोह तथा बलवे के नाम से पुकारते हो। देखो, इङ्गलिस्तान का आदर्श तुम्हारे सामने है। इङ्गलिस्तान में लोगों को सम्मति प्रकाश करने में पूरी स्वतन्त्रता दी गई है। क्या तुम में भी साहस है कि इस विषय में तुम भी इङ्गलिस्तान का अनुकरण कर सको ? क्यों तुम मेरे लेखों को रोकते हो ? क्यों सिपाहियों के लिये मेरे लेखों का पढ़ना अपराध बताते हो ? क्यों स्वीज़रलैण्ड गवर्न्मेन्ट से प्रार्थी होते हो कि वह मुझे निकाल दे ? क्या कभी स्वीज़रलैण्ड के कर्मचारियों ने भी तुमसे इस प्रकार की प्रार्थना की थी कि अमुक स्वीजरलैण्ड निवासी को तुम भी निकाल दो, क्योंकि उनको उस पुरुष से भय है ? मुझे पूर्ण विश्वास है कि तुम ऐसा नहीं कर सकते। तुममें स्वजातीय शासन के गुण नहीं हैं। तुम्हारा शासन केवल बल और सेना की सहायता से स्थिर है। इस कारण तुम्हें कुछ आश्चर्य्य नहीं करना चाहिए।

"यदि तुम अपने देशवालों को अपने अभिमुख लड़ने पर तत्पर पाओ, तो तुम्हारे शासन को जातीय बल नहीं प्राप्त है, तदनुसार हमको अधिकार है कि हम तुमसे लड़ें। मैं तुमको ये बातें स्पष्ट कहता हूं कि जिसमें तुमपर मेरे अभिप्राय तथा दृढ़ प्रतिज्ञाओं का ज्ञान हो जाय। मैं तुम्हारे मिथ्या कलङ्कों को बड़ी घृणा की दृष्टि से देखता हूं। मैं और मेरे मित्र उन कार्रवाइयों के विरुद्ध थे जिससे वर्तमान समय

में तुमको इतना भय हुआ है, क्योंकि हम उसको उचित समय से पूर्व समझते थे। परन्तु इससे यह न विचारना कि मैं अपने आप को दोषरहित करना चाहता हूं, वरन् मैं यह कहता हूं कि जब मुझसे हो सकेगा मैं तुम्हारी वृद्धि में विघ्न डालने कि चेष्टा करूंगा। इटालियन होने के कारण ऐसा करना मैं अपना परम कर्त्तव्य समझता हूं। मेरी आत्मा मेरी इस अनुमति का अनुमोदन तथा समर्थन करती है"। सन् १८७०में मेज़िनी इङ्गलैन्ड से सिसिली को चला गया। इसका कारण यह था कि थोड़े दिनों से उस टापू में शाह इटली के विरुद्ध ऐसा विरोध फैल रहा था कि बादशाह ने भयभीत हो जेनरल मेडसी को वहां का गवर्नर नियुक्त कर दिया। जेनरल को सिसिली निवासी बड़ी घृणा की दृष्टि से देखते तथा अन्तः करण से उससे अप्रसन्न रहते थे। परन्तु इसके साथही उससे सारा टापू भय खाता, क्योंकि वह अत्यन्त अत्याचार करता था। सिसिली निवासियों ने कई बेर उसके विरुद्ध बिगड खडे होने की इच्छा की और मेजिनी को लिखा कि यदि वह उनका पक्ष ले तो सिसिली को इटली से पृथक करके वहां पञ्चायती राज्य स्थापित कर दिया जाय, परन्तु मेज़िनी निरन्तर उन्हें मना करता रहा। पहिले थोड़े दिनों तक वे लोग उसका कहना मानते रहे, परन्तु अन्त में बलवे का दिन नियत करके मेज़िनी को लिख भेजा कि चाहे तुम साथ दो अथवा न दो, पर हम लोग तो कार्य कर बैठे हैं। मेज़िनी ने उनके प्रत्युत्तर में लिखा कि "यदि तुम नहीं मानते तो परमेश्वर के लिये जो कुछ करना हो सारे इटली के नाम पर करो, सिसिली को पृथक न करो"। वह इसी कारण इङ्गलैन्ड से चल खड़ा हुआ कि जिसमें स्वय वहां उपस्थित रहकर सिसिली को पृथक न होने दे। इस कार्य की सफलता

की उसे कुछ भी आशा न थी और जिन लोगों ने उसे उस समय प्रत्यक्ष देखा था, वे लिखते हैं कि वह अपने जीवन से हाथ धो बैठा था। एक मनुष्य ज्युडास नामक उसके साथ रहता था। यद्यपि मेजिनी को उससे घृणा थी, परन्तु वह अपने इस भाव को प्रगट नहीं होने देता था। उसके मित्रों ने बहुत समझाया कि वह गुप्तचर है। पर मेजिनी ने इस पर विश्वास नहीं किया। वह यही उत्तर देता रहा कि जिन दिनों में मेरे फांसी की आज्ञा देदी गई थी, उन दिनों में भी वह मेरे भ्रमणों के भेद को जानता था, पर उसने कुछ भी मेरा भेद किसी पर प्रगट नहीं किया। तब मैं क्योंकर विश्वास करलूं कि वह गुप्तचर है, तथा मेरा अनुसन्धान लेने आया है। पर इतनी सावधानी तो वह अवश्य रखता था कि दूसरों का भेद उससे गुप्त रखना, अपना कोई स्कीम उस से नहीं छिपाता था। ज्युडास ने मेजिनी के जाने का समाचार मेडिसी को दे दिया, और मेज़िनी सिसिली भूमि पर पैर धरते ही घेर लिया गया, और बन्दियों की नाईं फोर्टगिटिआ में बन्द कर दिया गया। इस फ़ोर्ट के सबसे ऊंचे बुर्ज में वह रक्खा गया। यह फ़ोर्ट समुद्र के बीच में एक चट्टान पर बना था। इसके चारो ओर सिपाही पहरा देते थे और फ़ोर्ट के नीचे समुद्र में पांच जंगी जहाज उपस्थित रहते थे। मेज़िनी के पकड़े जाने से बलवा रुक गया, क्योंकि पलेरमो के गवर्नर ने समाचार पाकर बहुत सी सेना मंगवाली और वह युद्ध के लिये प्रस्तुत हो बैठा। बलवे की ओर से तो गवर्नमेंन्ट निर्भय हो गई, पर मेज़िनी के विषय में मेडिसी को बड़ी चिन्ता उत्पन्न हुई, क्योंकि वह जानता था कि इस वृद्ध तथा दुर्बल अवस्था में यदि वह मर गया तो सारा देश कहेगा कि बादशाह ने इसका प्राण ले लिया और उस समय सर्वसाधा-

रण के बिगड़ खड़े होने, तथा शाही राज्य के भय में पड जाने की शंका है। इस कारण दो मास उपरान्त एक शाहजादे के जन्मोत्सव पर वह छोड दियागया। मेज़िनी यह विचार कर कि लोग उसके छूटने पर प्रसन्नता न प्रगट करें और उत्सव न करें, प्रातः काल फोर्ट से निकला और केवल एक मित्र को, जो बन्दी गृह में उसे मिलता रहा था, साथ लेकर रोम से पार हो गया। वह ऐसे क्रोध तथा ऐसी चिन्ता में था कि अपने इस मित्र से भी वार्तालाप नहीं करता था और शान्तभाव से परमेश्वर की इच्छा पर उसने अपने को छोड दिया था। उसने अपने मनमें ठान लिया था कि रोम में न जाऊंगा। पर रात को ट्रेन वहीं ठहर गई और आगे जाने को कोई दूसरी ट्रेन उस समय न मिली। इस कारण बेवस हो उसे वहीं ठहरना पड़ा। शहर के बाहर कोई होटल भी न था जिसमें वह रात्रि वहीं व्यतीत करता। इस कारण सब से निकट के होटल में अपना नाम परिवर्तित कर अपना ठीक परिचय न देकर वहीं ठहरा। प्रातःकाल जेनेवा की ओर चल खड़ा हुआ, जहां पहुंच कर गुप्त भाव से वह अपने मित्र के घर में रहा, और अपनी माता की समाधि पर पुष्प चढा कर इङ्गलैन्ड को चला गया, इस कारण कि वहां कुछ काल तक उन मित्रों के निकट रहे जो कि उसके जिलावतनी के दिनों में उसे बहुत कुछ धीरज देते थे।

कुछ कालोपरान्त इस वृद्ध अवस्था में वहां से चला और एक पत्र द्वारा अपनी सम्मति प्रगट करने के अभिप्राय से स्वीज़रलैन्ड जा पहुंचा। जिस दिन वहां से विदा हुआ, उसके एक दिन पहिले उसने लिखा कि "गतवर्ष की मूर्खता तथा नीचता से, जो दुए लीडरों के कारण मेरे देशवासियों ने ग्रहण की है, मुझे पूरा विश्वास हो गया कि मेरे देशवासियों की राजनैतिक शिक्षा इस समय पर्य्यन्त प्रारम्भ भी नहीं हुई।

अभी इटली देश को शिक्षा की आवश्यकता है और मेरा यह विचार मिथ्या निकला कि शिक्षा से आगे निकल कर कुछ प्रत्यक्ष कर दिखाने का समय आगया है"। उसने पुनः प्रतिज्ञा की कि शेष जीवन इसी शिक्षा में व्यतीत करूंगा। अपने देशवासियों की कृतघ्नता से उसका चित्त अंश मात्र चलायमान नहीं हुआ था। उसको यह देखकर मानो एक प्रकार की धीरता आती थी कि इस पत्र के प्रकाशित करने में उसके ऐसे ऐसे सहगामी तथा सहायक थे जिन्होंने कि बड़ी बड़ी यमयंत्रणा पाने पर भी अपनी प्रतिज्ञा भंग न की थी, और कभी सांसारिक लोभवश हो अपनी सम्मति प्रगट करने में असमर्थ न हुए थे। वह विचारता था कि ऐसे सत्पुरुषों का लेख जाति को अवश्य उपकारक होगा, जाति राजनैतिक उन्नति करेगी। इन लोगों के साथ वह एक वर्ष तक इस पत्र को प्रकाशित करता रहा। उसके चरित्र-लेखकों ने लिखा है कि उसका यह परिश्रम आश्चर्यजनक फल दिखाता था, क्योंकि अब की वर्ष में वह सदा किसी न किसी रोग से पीड़ित रहा और बड़ी बड़ी कठिनाइयों से दिन व्यतीत करता रहा। इसी वर्ष के अन्त में उसने इङ्गलैन्ड जाने के अभिप्राय से आलप्स् पर्वत पार किया और इसी यात्रा के बीच वह निमोनिया के रोग से परलोक को सिधारा। ता० १० मार्च सन् १८७२ को यह दुर्घटना हुई। अन्तिम समय में भी उसने अपनी पवित्र जन्मभूमि को स्मरण करते हुए प्राण त्यागा। जिसने कि अपना यावज्जीवन अपनी जन्मभूमि की सेवा में व्यतीत किया था, वह अन्त काल क्योंकर उस जन्मभूमि का ध्यान विसार सकता था! सत्य है, यदि मनुष्य जीवन धारण करे, तो उसे इस प्रकार व्यतीत करे। व्यवहारिक गौरव, व्यवहारिक पवित्रता, व्यवहारिक वीरता हो तो ऐसी हो।

यदि ऐसे ऐसे पवित्र महापुरुष समय समय पर हममें उत्पन्न न होते रहें तो देश तथा मनुष्य का उद्धार होना असम्भव हो जाय। ऐसे ही ऐसे सत्पुरुषों के जीवन से यह उदाहरण मिलता है कि मानुषी आत्मा का उद्देश्य उच्चतम श्रेणी का तथा पवित्र है, और आत्मा की उन्नति, आत्मा की स्वच्छन्दता, आत्मा का गौरव, मनुष्य के निज परिश्रम पर निर्भर है यदि मनुष्य एक उच्चतम आदर्श अपने सामने रख कर यावज्जीवन उसके अनुकूल दृढ़ता तथा शुद्ध अन्तः करण से उसकी प्राप्ति में प्रयत्न करे तो इसमें कुछ संशय नहीं कि वह शीघ्र उस श्रेणी तक पहुंच जायगा।

मेज़िनी का जीवन बतलाता है कि यदि दृढ़ता तथा उद्योग किया जाय तो कोई ऐसी कठिनाई नहीं जिसका साधन न हो सके, कोई ऐसी कठिनाई नही जो परिश्रम से सरल न हो जाय। इसके जीवन से यह भी उदाहरण मिलता है कि जो लोग शुद्ध अन्तः करण से किसी विशेष विषय में सयत्न रहते हैं, वे कठिनाइयों से कदापि भय नहीं खाते, प्राण को हथेली पर रख कर आचरणीय और करणीय विषयों को पूरा करते हैं। यदि प्राण की रक्षा करते हैं तो केवल इस लिये कि जिसमें उस कृत्य को समाप्त कर सकें। यदि अपने शत्रु को उत्तर देते हैं तो इस लिये कि उनके काम में विघ्न न पड़े। यदि दूसरे की भूल को प्रगट करते हैं तो इसलिये कि जिसमें लोग सन्मार्ग पर रहें। उनके किसी काम में उनका स्वार्थमय अभिप्राय नहीं रहता और संसार के कोई शत्रु कुछ ही क्यों न कहे, चाहे कितने ही कलङ्क क्यों न लगावे, परन्तु वे दत्तचित्त हो अपने कर्तव्य में सयत्न रहते हैं। उनमें धीरज तथा सहनशीलता अधिकतर होती है। उनकी प्रतिज्ञा ऐसी दृढ़ होती है कि कोई भी उनको उससे चलायमान नहीं कर

सकता। इधर की पृथ्वी उधर हो जाय, जीवित रहें अथवा मर जावें, रोटी मिले अथवा न मिले उनके भाई बन्धु उनसे प्रसन्न रहें वा रुष्ट हो जांय, मान रहे वा अपमान हो, चन्द्र सूर्य टर जांय, पर उनकी दृढ़ता नहीं चलायमान होती। मेज़िनी यावज्जीवन दूसरे देशों में रहा, परन्तु उसके देहान्त होते ही सारे देश में हाहाकार तथा महाशोक मच गया और चारो ओर से लोग शोक प्रगट करने लगे। इटली निवासियों को जान पड़ा मानो उनकी उन्नति का ध्रुव तारा अस्त हो गया। उसकी लाश बड़े धूम धाम से जेनेवा लाई गई। उसके जनाजे के साथ ८० हज़ार मनुष्य शोक मना रहे थे। सारांश यह कि यद्यपि मेज़िनी की मर्य्यादा उसकी जीवित अवस्था में न हुई, पर मृत्यु होते ही सारे देश को उसकी क़दर ज्ञात हो गई।

मेज़िनी का नाम उन नामों में से है जिन पर सारा देश इस समय अपना जीवन न्योछावर कर देने को उद्यत है। इसका नाम प्रत्येक इटालियन के हृदय पर अंकित है और मेज़िनी की जन्मभूमि अपने ऐसे पुत्र उत्पन्न करने के कारण मारे अभिमान के फूली नहीं समाती है।

कुछ बहुत ही उपयोगी पुस्तकें।

दुर्गेशनन्दिनी।

ऐतिहासिक और अति रोचक उपन्यास। बङ्गाल के प्रसिद्ध बङ्किम बाबू के मशहूर उपन्यास का अनुवाद मूल्य ॥=)

धर्म्म और विज्ञान।

यह पुस्तक हिन्दी के प्रेमी राजा साहब भिनगा की अनुमति और सहायता से प्रकाशित हुई है। इसको लक्ष्मी के सम्पादक ला० भगवान दीन जी ने योरप के मशहूर लेखक मिस्टर ड्रेपर की लिखी एक अङ्गरेजी पुस्तक "Conflict between religion and science" का अनुवाद किया है। रायल आठ पेजी ३८७ पन्ने की पुस्तक है। यह पुस्तक नई रोशनी और विज्ञान का प्रचार करती है और इसने विलायत के अंधविश्वास को दूर करने में बड़ी मदद की है। मूल्य २)

मेगास्थनीज।

(इतिहास प्रकाशक समिति द्वारा प्रकाशित)

भारत वर्ष के लगभग २३०० वर्ष के पुराने वृत्तान्त के जानने का शौक है तो इस यूनानी यात्री के लिखे वृत्तान्त को पढ़िये मूल्य ।॥)

संसार।

यह सामाजिक उपन्यास बङ्गाल के मशहूर लेखक सर रमेशचन्द्र दत्त लिखित पुस्तक का हिन्दी अनुवाद है। इसमें भारत वर्ष के घरेलू सामाजिक अवस्था का पूरा खाका बड़ी उत्तमता से खींचा है और साथ ही सुधार की ऐसी जरूरत जिनका सामना हमारे देशके लोगों को नित्य प्रतिदिन पड़ता है खूब दिखलाया है। ऐसे उपन्यास अच्छी रुचि पैदा करते हैं। अनुवादक बा० बेणी प्रसादजी। मूल्य १)

आदर्श नगरी ।

यह उपन्यास बड़ा ही रोचक है इसमें विज्ञान की हानि और लाभ दोनों ही दिखलाए हैं। इसमें नगरी कैसी बसनी चाहिए और उत्तम नगरी का क्या लाभ है, खूब दिखाया है तथा विज्ञान से विध्वंस करने के उपाय तथा उससे बचने के उपाय तथा लाभ व हानि खूब दिखलाया है। इसके रचयिता बा० बेणी प्रसाद जी हैं। मूल्य पहला भाग ॥) दूसरा भाग ॥=)

बुन्देलखण्ड का शिवाजी

महाराज छत्रसाल का जीवन चरित्र ।

इस पुस्तक में बुन्देलखण्ड के महाराज छत्रसालजी का जीवन वृत्तान्त का लेख है। इनकी समस्त वीरता, धीरता, पुरुषार्थ, नीति, चातुर्य्य और देशहितैषिता का क्रम से गद्य में वर्णन है साथ ही बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास और प्राण नाथ जी का जीवन चरित्र भी संक्षेप में लिखा है मूल्य। २ भाग का ॥।)

महाराज श्रीकृष्णचन्द्र का जीवन चरित्र ।

इस पुस्तक को पंजाब के मशहूर लीडर ला० लाजपत राय जी की लिखी उर्दू पुस्तक से हिन्दी में बा० केशव प्रसाद सिंहजी ने अनुवाद किया है। यह पुस्तक हिन्दी में नए ढङ्ग की है। इसके ग्रंथकार ने शास्त्रों के प्रमाणों और युक्तियों द्वारा इस बात को सिद्ध कर दिया है कि श्री कृष्ण महाराज कैसे राज नीति कुशल और सचरित्र थे मूल्य ॥।)

बङ्ग विजेता ।

यह उपन्यास बङ्गाल के साहित्य सम्राट व प्रसिद्ध लेखक सर रमेशचन्द्रदत्त लिखित पुस्तक का अनुवाद है। मूल्य ॥।)

प्राचीन भारत वर्ष की सभ्यता का इतिहास ।

(चार भाग में छपकर समाप्त होगया)

सर रमेशचन्द्र दत्त की लिखी हुई पुस्तक का अनुवाद ।

बा० श्याम सुन्दर दास जी बी० ए० द्वारा सम्पादित ।

यह पुस्तक काशी 'इतिहास प्रकाशक समिति' की ओर से छपी है। हिन्दी भाषा में अपने ढंग का नया इतिहास है और भाषा मे इतिहास के अभाव को दूर कर रहा है। इस इतिहास मे हिन्दुओं की प्राचीन सभ्यता का संसार की अन्य प्राचीन जातियों की सभ्यता से मुकाबला कर के दिखलाया है कि भारत वर्ष की प्राचीन सभ्यता उन जातियो से बहुत बढी हुई थी। मूल्य –भाग पहला १॥) भाग दूसरा १॥) भाग तीसरा १।) भाग चौथा १॥) चारों भाग के सेट का मूल्य ५)

वनिता विनोद ।

काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने स्त्रियों के पढने की उत्तम पुस्तकों का अभाव देखकर महाराज साहब भिनगा के प्रस्ताव और सहायता से अति शिक्षादायक पुस्तक छपवाई है १८ उपयोगी विषय हिन्दी के १२ चुने हुए लेखकों की लिखी हुई और बा० श्याम सुन्दर दास जी बी० ए० द्वारा सम्पादित है। मूल्य ॥=)

बालाविनोद ।

यह पुस्तक स्त्री शिक्षा पर अति रोचक तथा बड़ी लाभ दायक है इसको स्वर्गवासी बा० वशीलाल सिंह जी ने लिखा है। यह कामिनी कल्पद्रुम का एक भाग है। इसको संशोधित करके बा० श्याम सुन्दर दास जी बी० ए० ने सम्पादित किया है। इसमे लड़कियों तथा स्त्रियों के लिये उपदेश कूट कूट कर भरा है। ५८ विषय इसमें हैं। मूल्य ।=)

पुस्तक मिलने का पता—

माधो प्रसाद, पुस्तक कार्य्यालय, धर्म कूप, काशी ।

PRINTED BY PT ATMA RAM SHARMA,
at the George Printing Works Kalbhairo, Benares City